सत्य नाम।

श्री कबीर साहिब।

श्रीज्ञानसागरकी विषयानुक्रमणिका।

अवतारोंकी कथा।

ज्ञानसागरकी विषयानुक्रमणिका ।

इति ।

सत्यसुकृत आदिअदली, अजर, अचिन्त, पुरुष, मुनीन्द्र, करुणामय, कबीर, सुरति योग संतायन; धनी धर्मदास, चूरामणि नाम, सुदर्शन नाम, कुलपति नाम, प्रमोध गुरुबालापीर, केवल नाम, अमोल नाम, सुरतिसनेही नाम, हक्क, नाम पाकनाम, प्रकट नाम, धीरज नाम, उग्रनाम, दया नाम, की दया बंश-व्यालीस कीदया ।

अथ ज्ञान सागर प्रारम्भः ।

सोरठा—सत्यनाम है सार, बूझो संत विवेक करि ॥
उतरो भव जल पार, सतगुरु को उपदेश यह ॥
सतगुरु दीनदयाल, सुमरो मन चित एककरि ॥
छेड़ सके नहिं काल, अगम शब्द प्रमाण इमि ॥
बंदौ गुरु पद कंज, बंदीछोर दयाल प्रभु ॥
तुम चरणन मन रंज, देत दान जो मुक्ति फल ॥

चौपाई ।

मुक्ति भेद मैं कहौं विचारी । ता कहँ नाहिं जानत संसारी ॥
बहु आनंद होत तिहिं ठाऊँ । संशय रहित अमरपुर गाऊँ ॥

तहवां रोग सोग नहिं होई । क्रीडा विनोद करे सब कोई ॥
चंद्र न सूर दिवस नहिं राती । बरण भेद नहिं जाति अजाती ॥
तहँवा जरा मरन नहिं होई । बहु आनंद करैं सब कोई ॥
पुष्प विमान सदा उजियारा । अमृत भोजन करत अहारा ॥
काया सुन्दर ताहि प्रमाना । उदित भये जनु षोड़स भाना ॥
इतनौ एक हंस उजियारा । शोभित चिकुर तहां जनु तारा ॥
बिमल बास तहँवां विगसाई । योजन चार लौं वास उड़ाई ॥
सदा मनोहर क्षत्र सिर छाजा । बूछ न पैर रंक औ राजा ॥
नहिं तहां काल वचन की खानी । अमृत वचन बोलै भल वानी ॥
आलस निद्रा नहीं प्रगासा । वहुत प्रेम सुख करैं विलासा ॥

साखी—अस सुख है हमरे घरे, कहैं कवीर समुझाय ॥
सत्त शब्द को जानि के, असथिर वैठे जाय ॥

चौपाई ।

सुन धर्मणि मैं कहौं समुझाई । एक नाम खोजो चितलाइ ॥
जिहिं सुमरत जीव होय उवारा। जातें उतरौ भव जल पारा ॥
काल बीर बांका बड़ होई । बिना नाम बाचै नहिं कोई ॥
काल गरल है तिमिर अपारा । सुमिरत नाम होय उजियारा ॥
काल फांस डारै गल माहीं । नाम खड्ग काटत पल माहिं ॥
काल जँजाल है गरल स्वभाऊ। नाम सुधारस विषय बुझाऊ ॥
विष की लहर मतो संसारा । नहिं कछु सूझे वार न पारा ॥
सुर नर माते नाम विहूना । औंट मुये ज्यों जल बिन मीना ॥
भूल परे पाखँड व्यवहारा । तीरथ वृत्त औ नेम अचारा ॥
सगुण जोग जुगति जो गावै । बिना नाम मुक्ती नहिं पावै ॥

साखी—गुण तीनों की भक्ति में, भूल परयो संसार ॥
कहँ कबीर निज नाम बिन, कैसे उतरै पार ॥

धर्मदास वचन–चौपाई।

बिनऊँ स्वामी दोइ कर जोरी। कहौ गुसाईं नामकी डोरी ॥
निरंकार निरंजन नाऊ। जोत स्वरूप सुमरत सब ठाऊँ॥
गावहिं विद्या वेद अनूपा। जस रचना कियो जोति सरूपा॥
भक्ति वत्सल निजनाम कहाई। जिन यह रची सृष्टिदुनियांई ॥
सोई पुरुष कि आहि निनारा। सो मोहि स्वामी कहौ व्यवहारा
जिहिंतेहोय जीव को काजा। सो मैं करहु छोड कुल लाजा॥
होहु दयाल दयानिधि स्वामी। बोलहु बचन सुधा रस बानी॥
नाम प्रभाव निज मोहि बताओ। होहु दयाल मम तृषा बुझाओ॥
साखी–जो कुछ मुझे सन्देह है, सो मोहि कहो समुझाय ॥
निश्चय कर गुरु मानिहौ, औ बंदो तुम पायँ ॥

साहिब कबीर वचन–चौपाई।

तुमसों कहौं जो नाम विचारी। ज्योति नहीं वह पुरुष न नारी॥
तीन लोक ते भिन्न पसारा। जग मग जोत जहां उजियारा॥
सदा बंसत होत तिहि ठाऊं। संशय रहित अमरपुर गाऊं ॥
तहँवा जाय अटल सो होई। धरमराय आवत फिरि रोई ॥
बरनो लोक सुनो सत भाऊ। जाहि लोक तें हम चलि आऊ॥
जग मग जोती बहुत सुहावन। दीप अनेक गिनें को पावन ॥
जगमग ज्योति सदा उजियारा। करी अनेक गिनेंको पारा ॥

छंद।

जहँ ज्योति जग मग अति सुहावन तत्त्व वारिध अतिचलै ॥
ढहत दोई कुल तिमिर मनो पद्म झलहल हलै ॥
फेन उढगन बहन लाग शेसि मनोहर हेरि को ॥
किमि देऊँ पटतर बूझ देखो भाव नाहिं वहां जोर को ॥
सोरठा–शोभा अगम अपार, वर्णत बनैं न एक मुख ॥
कही न जात विसतार, जो मुख होवै पदम सत॥

कर्मदास वचन—चौपाई ।

हे स्वामी मोहि आदि सुनाओ। कैसे पुरुष वह लोक बनाओ ॥
कैसे द्वीप करी निर्मावा। होहु दयाल सो मोहि बतावा ॥

साहब कबीर वचन ।

सुन हंसा तोहे कहब विचारी। लोक द्वीप जिमि करी सम्हारी॥
हते अदेह दुतिया नाहिं काऊ। सुरित सनेही जान कछु भाऊ॥
नहिं तहाँ पांच तत्त्व परगाशा। गुन तीनों नाहिं नहीं अकाशा ॥
नहिं तहँ ज्योति निरंजनराया। नाहिं तहँ दशौ जनम निर्माया॥
नाहिं तहँ ब्रह्मां विष्णु महेशा। आदि भवानी गवरि गनेशा ॥
नहिं तहँ जीव सीव कर मूला। नाहिं अनंग जिहिंते सब फूला॥
नाहिं तहँ ऋषी सहस्र अठासी। षट दरशन न सिद्ध चौरासी॥
सात वार पन्द्रह तिथि नाहीं। आदि अंत नाहिं काल की छाहीं॥

छंद ।

नाहिं कुरम्ह चक्रिय वारि पर्वत अग्नि वसुधा नाहिं हो ॥
शून्य विशून्य न तहां होई अगाध महिमा सो कहो ॥
जिमि पुहुप तिमि छाय राखो बास भरो ता संग मई ॥
स्वरूप बूझो अगम महिमा आदि अक्षर अंग मई ॥
सोरठा—प्रगट कहौ जिमि रूप, देखो हृदय विचारि के ॥
आदहि रूप स्वरूप, जिहिं ते सकल प्रकाश भयो ॥

चौपाई ।

तिनहिं भयो पुन गुप्त निवासा। स्वासा सार तें पुहुमि प्रकाशा ॥
सोई पहुप विना नर नाला। ज्योति अनेक होत झल हाला ॥
पुहुप मनोहर सेतई भाऊ। पुहुप द्वीप सबही निर्माऊ ॥
अजै सरोवर कीन्हों सारा। अष्ट कमल ते आठौं वारा ॥
षोडश सुत तबही निर्मावा। कछू प्रगट कछु गुप्त प्रभावा ॥

पुहुप द्वीप किमि करब बखाना। आदि ब्रह्म तहँवा अस्थाना ॥
सत्रह संख पंखुरी राजै। नौ सौ संख द्वीप तहाँ छाजै ॥
तेरह संख सुरंग अपारा। तिहि नहिं जान काल बरियारा

धर्मदास वचन।

धर्मदास कहैं सुनो गुसाईं। द्वीप अनेक पुरुष के ठाईं ॥
सो स्वामी मोहि भेद बताओ। दया करो जानि मोहि दुराओ ॥
तुम सों वरनि कहौं सत भाऊं। मैं मनो आज महां निधि पाऊं॥
सुनत वचन गद २ सिर मोरा। थकित भये जनु चंद्र चकोरा ॥
मैं भुजंग तुम मलयागीरा। करहु दया मम दुखित शरीरा ॥

साहब कबीरो वचन।

धर्मदास पूछो जो मोही। सो मैं भेद कहौं सब तोही ॥
कमल असंख भेद कहँ जाना। तहँवा पुरुष रहे निर्वाना ॥
मोही सतगुरु दियो बताईं। सो सब भेद कहों तुम पाईं ॥
सप्त पंखुरी कमल निवासा। तहँवा कीन्ह आप रहि वासा ॥

साखी—शीश दरस अति निर्मल, काया न दीसत कोय ॥
पदम संपुट लग रहै, बानी विगसन होय ॥

चौपाई।

प्रगट द्वार जब देखौ शीसा। धर्मनि हिये देखौ अहे ईशा ॥
पाइर द्वीप जहँ निर्मल ठौरा। सो सब भेद कहौं कछु औरा ॥
अंबूद्वीप हंस को थाना। पाइर द्वीप पुहुप निर्वाना ॥
नौसौ करी ताहि के हीठा। गुरु प्रसाद सबै हम दीठा ॥
तहां आइ पुन पाइर द्वीपा। मंजुल मंगल करी समीपा ॥
तहँवा जाइ अटल सो होईं। धर्मराय आवै फिर रोईं ॥
द्वीप अनेक औ करी अनेका। पाइर द्वीप हंस के थेका ॥
चार करी हैं सब से सारा। बहु शोभा तहँ रूप अपारा ॥

साखी—करी भेद सुन हंसा, आइ देखु सत लोक ॥
गुरु जो भेद बतावहीं, मिट जाईं सब धोख ॥

धर्मदास वचन—चौपाई ।

हे स्वामी मैं बिनऊं तोही । कछु संशय जिव उपज्यो मोही॥
धर्मराय नहिं पायब दीपा । और सबै सुत द्वीप समीपा ॥
कारण कौन दरस नहिं होई । कहौ अगम जानि राखो गोई ॥

साहब कबीरौ वचन ।

जो तुम पूछो अगम सन्देशा । सो सब तोहि कहौं उपदेशा ॥
आदि पुरुष अस कीन्हों साजा । पांच बुन्द हुलास उपराजा ॥
बुन्दहि बुन्द अंड परकाशा । धर्म धीर जेहि अंड निवासा ॥
अटल जोत सुरंग उजियारा । तहँवा अंड रहै मनियारा ॥
धर्म धीर जबही उतपाना । आदि ब्रह्म तबही सकुचाना ॥
एकहि मूल सबै उपजाई । मैंद्यो तेज अंड कुन्याई ॥

साखी—तेज रह्यौ जिहिं अंड मो, तेहि नाहिं दीन्हों ठौर ॥
तेहि तें उपज्यो धर्म अव, वंश अगिन के जोर॥

चौपाई ।

बावन लक्ष बेर अनुमाना । मेटो न मिटत शब्द परवाना ॥
एकहि मूल सबै उपजाई । मिटै न अंड तेज अन्याई ॥
धर्मराय है काल अँकूरा । उपजो तहां काल कौ मूरा ॥
तबहि पुरुष अस जुगत विचारा । रहै धर्म द्वीप सों न्यारा ॥
जौपै रहै सदा सिवकाई । तौ एक द्वीप तुमहि निर्माई ॥
पुरुप शब्द ते सबै उपराजा । सेवा करैं सुत अति अनुरागा ॥
जानें भेद न दूसर कोई । उत्पति सब की बाहिर होई ॥
अभिअन्तर जो उत्पति होई । काया दरश पाय सब कोई ॥
काया दरश सुरति इक पावे । संगहि द्वीप सबै निर्मावे ॥

धर्म धीर नहिं पावै द्वीपा। और सबै सुत द्वीप समीपा॥
धर्मराय अस कीन्ह बनाई। कर सेवा तेहि जागहि आई॥
सेवा बहुत भांति सों किएऊ। आदि पुरुष तब हर्षित भयऊ॥

साखी—सेवा कीन्ही धर्म बड़, दियो ठौर अब सोय॥
जाय रहो वहि द्वीप में, सेवा निर्फल न होय॥

चौपाई।

सात द्वीप कौ पायो राजू। भयो अनंद धर्म मन गाजू॥
सेवा करि पुन कीन्ह निहोरा। सुनो सहज तुम भ्राता मोरा॥
सेवा बसहि द्वीप मैं पाएऊं। कैसोरचो मोहि गम्य न आएऊं॥
पुरुष सों विनती करु यह भारी। हे भ्राता मैं तुम बलिहारी॥
करिहौं सोई जो आज्ञा पाऊं। कैसे मैं नव खंड बनाऊँ॥
चले सहज जहं द्वीप अमाना। कीन्ह जाय दण्डवत प्रणामा॥
बहुविधि विनती सहज कियो जबही। बेग पहुप बानी भई तबही॥
पुरुष वाणि तें भयो उजियारा। सुनहु सहज तुम बचन हमारा॥
पक्षिपालना पायहे अंडा। सो लै धर्म रचै नव खंडा॥
चले सहज तब बार न लावा। धर्म धीरसौं मता सुनावा॥

साखी—सुनत सँदेशो पुरुष को, धर्म शीस तब नाव॥
पायो आज्ञा पुरुष की, अब फाबी मो दांव॥

चौपाई।

सुनत सँदेश भयो हरषंता। आन अंड जो चले तुरंता॥
देखो धर्म जब कूर्म शरीरा। वारह पालंग है बल वीरा॥
नव पालंग धर्म परमाना। बनै ना घात तब करे तिवाँना॥
धावहि दशहू दिशा रिसाई। कैसे अंड लेउं मैं जाई॥
तबहि जुक्ति अस कीन्ह बनाई। तोरि सीस अस कर्यो उपाई॥
शीस कीन्ह तब नख सौं छीना। अमी अंक तोरि कियो मीना॥

शीस तोरि लियो द्वीप अपारा । तबही धर्म भयो बरियारा ॥
पांचौ तत्त्व अंडसौं लीन्हा । गुन तीनौं सुशीस कर कीन्हा ॥
पांचौ तत्त्व तीन गुन सारा । यही धर्म सब कीन्ह पसारा ॥
तब कियो नीर निरंजन राया । मीन रूप तबही उपजाया ॥
करि चरित्र धर्म तब आया । आय सहज सों विनती लाया ॥

साखी—जाय कहौ तुम पुरुष सों, बहु सेवा मैं कीन्ह ॥
सबसुत रहिहैं लोकमहँ , नव खँड हम कहँ दीन्ह ॥

चौपाई ।

इतने में नहिं मोर रहाऊ । जहँवा रहब देव मोहि ठाऊँ ॥
चले सहज पुरुष पर जबहीं । विनती धर्म कीन्ह पुनि तबहीं ॥
माग्यो बीज कीन्ह बड़ लोभा । जातैं द्वीप पावों मैं शोभा ॥
सहज बिनय पुरुष सों कीन्हा । हे स्वामी तुव सुत बल हीना ॥
मागै और ठौर पुनि सोई । धर्म धीर जो तुव सुत होई ॥
अति अधीन माँगै जो बीजे । सोहे द्वीप पुरुष वहि दीजे ॥
तबहि पुरुष सेवा बश भयऊ । अष्टांगी कामिनि सो दयऊ ॥
मानसरोवर ताकर नाऊँ । सोऊ दियो धर्म कहँ ठाऊँ ॥
अष्टांगी कन्या उत्पानी । जासौं कहिये आदि भवानी ॥
रूप अनूप शोभा अधिकाई । कन्या मान सरोवर आई ॥

साखी—चौरासी लक्ष जीव सब, मूल बीज के संग ॥
ये सब मान सरोवरा, रच्यो धर्म बड़ रंग ॥

चौपाई ।

सहज संदेशो ल्याये जहँवा । धर्म धीर ठाढे हैं तहँवा ॥
कह्यौ संदेश धर्म मन गाजा । मान सरोवर जाइ विराजा ॥

साखी—देखि रूप कामिनि कौ, पल भर रह्यो न जाइ ॥
आगे पीछे ना सोचिया, ताकौ लीन्हेसि खाइ ॥

चौपाई।

कन्या सोंअस कीन्हअन्याई। सहजसों लियो जोतुरतछुडाई॥
यहै चरित पुरुष जब देखा। दीन्हें शाप सो कहौं विशेखा॥
सवा लक्ष जीव करौ अहारा। तऊ न ऊदर भरै तुम्हारा॥
सुमिरन कूर्म्ह पुरुष को कीन्हाँ। अहहो पुरुष धरम सिर छीना॥
तुव आज्ञा मैं अंड जो दीन्हाँ। धर्मराय काहे सिर लीन्हा॥
सुनत बचन प्रभु बहुत रिसाने। जोगजीत तबही उतपानै॥
आज्ञा भई तुम बेग सिधारौ। धर्मराय कहँ मार निकारौ॥
आज्ञा मांग चले तब ज्ञानी। धर्मराय सों बातैं ठानी॥
अरे पापी तू पुरुष को चोरा। भागहु बेग कहा सुन मोरा॥
सुनतहि क्रोध भये धर्म धीरा। जोगजीत के सन्मुख भीरा॥
जोगजीत तबहीं फटकारा। जाय रहौ तब लोक ते न्यारा॥
जोग संतायन चल भये जबही। धर्म धीर आयौ पुनि तबहि॥
बार अनेक युद्ध जिहिं कीन्हाँ। मारे न मरत बहुत बल कीन्हा॥

धर्मराज वचन।

तब मैं हतौ पुरुष के ठाऊँ। तब नाहिं सुन्यो तुम्हारौ नाऊँ॥
को तुम हौ सो मोहि बताऊ। सहज भाव तुम फेर बनाऊ॥

ज्ञानी वचन।

धर्म धीर सों कहा बखानी। मर्दन धर्म नाम मम ज्ञानी॥
जब तुम कीन्ह चार का काजा। तातें पुरुष मोहि उपराजा॥
मारहुँ तोहि कहौ सतभाऊ। अष्टांगी तैं कामिन खाऊ॥
सुनतहि क्रोध धरम परजरेऊ। जरत हुताश मनहु घृत परेऊ॥

साखी–करहिंयुद्ध बहुभांति सों, कैसेहु क्षमा न होय॥
क्षणएकलरचौ सहज तुम, करु उपाय अब सोय॥

चौपाई ।

पुरुष आज्ञाअस भयउअपारा । मारहु धर्म के मांझ कपारा ॥
आज्ञा पुरुष ज्ञानी दियो जबही। मारौ शीश परो खस तबही ॥
संशय भयो तासु की देहा । ताकहँ भयो जी महँ संदेहा ॥
धर्म धीर कौ रुधिर से जबही । विषम सरोवर उपजो तबही ॥
कन्या निकस जो बाहिर आई । संशय काल तिहिं घटहि समाई
शीस दियो लै कुम्हं के पासा । पुरुष आज्ञा सौं कीन्ह निवासा॥
आज्ञा कीन्ही बेग निकारहु । कहै जोइ अब धर्म सिधारहु ॥
छांडहु अंश खंड का भाऊ । बिषम सरोवर माहि सो जाऊ ॥
देखो बहुत रूप उजियारा ।अस कामिनि तैं कीन्ह अहारा ॥
फिर मैं गयो पुरुष के पासा । धर्म धीर अस करहि तमाशा ॥
कह कामिनि सुन पुरुष पुराना। मैं अपना कछु मरम न जाना ॥
कौन पुरुष मोही उपजाई । सो मोहि गम्य कहौ समुझाई ॥

धर्मराय वचन ।

कन्या मैं उपजायो तोही । रहौ अलख नहिं भेंटसि मोही॥
कन्या कह सुन पिता हमारा । खोजो वर होय व्याह हमारा ॥
बर खोजौं जो दुतिया होई । कन्या मैं अब व्याहौं तोही ॥
पुत्री पिता न होवत व्याहा । पितहि पाय बहुतै औगाहा ॥

साखी—धर्म कहै सुन कन्या, भर्म भयो मति तोहि ॥
पाप पुण्य हमरे घरै, क्या डहकस तैं मोहि ॥

चौपाई ।

आदि भवानी औ धर्मराऊ । इन सब कीन्ह सृष्टि निमाऊ ॥
पांच तत्त्व तीन गुण रहेऊ । बीज सहित अष्टांगी दएऊ ॥
चौरासीलक्षजीवदियो सम्हांरी। रचहु सृष्टि अब आदि कुँवाँरी॥
सेवा करहु सृष्टिकी ओरा । अलख निरंजन नाम है मोरा ॥

छंद।

कहैं भवानी सुनहु निरंजन यह मंत्र निज सोई भले।
अस करहु कुलफ कपाट दै सब जीव जाहितैं ना चले॥
दस चार सुत दीजे भयंकर जिहिं तैं होय त्रास हो।
तिहुँ लोक होत झटा पटा अब चार जुगन निवास हो॥
सोरठा—चौदह बीर अपार, चित्रगुप्त दुर्गदानी सम॥
आन देई आहार, सवा लक्ष जिव रात दिन॥

चौपाई।

जस कछु मत कियौ आदि भवानी। धरमराय ऐसी मति ठानी॥
जाइ रहौ जहाँ पाँजी बाँका। धरती शीस सरग का नाका॥
दशौं दिशा रूँधे सब ठाऊ। है द्वार मैं कहि समुझाऊँ॥
गुरु जो कहै औ पंथ बतावै। ओहि पंथ हंस घर आवै॥
धर्मराय मूँदो वह द्वारा। तबहि भवानी युक्ति विचारा॥
तीनौं गुण तिय अंड सम्हाँरा। पुनि भाखौ आगिल व्यवहारा॥
नाम कहौं कह राखौं गोई। रजगुन, तमगुन, सतगुन, होई॥
अष्टांगी अंडन मन दीन्हां। धरमराय कछु उद्यम कीन्हां॥
मीन रूप जो प्रथम सुभाऊ। ता पीछे कुम्हँहि निर्माऊ॥
ता पीछे बाराह को थाना। ता पर उग्र कीन्ह उतपाना॥

छंद।

अस कीन्ह सबही निरंजना तब दीन्ह मही को थेग हो॥
महीतल दीन्हा मीन कच्छप सूकर दीन्हौं शेष हो॥
सुम्मेर पर्वत अति धुरंधर दीन्ह मही जो ना चलै॥
दशौं दिशा दिग्गज चार दीन्हैं जिहितैं मही ना डग मगै॥
सोरठा—दीन्हौं महि कौ भार, वारी जगत लगाय कै॥
जाकौ तमहि अपार, चतुर विधाता ठग भये॥

धर्मदास वचन—चौपाई।

धर्मदास टेके गहि पाऊ। नाम जमन कौ मोहि सुनाऊ॥
चौदह यम मोहि बरनि सुनाओ। दया करहु जिन मोहि दुरावो॥

साहेब कबीर वचन।

दुर्ग दाँनी चित्रगुप्त वरियारा। एतौ जमन के हैं सरदारा॥
मनसा मल्ल अपरबल मोहा। काल सैन मकरंदी सोहा॥
चित चंचल औ अंध अचेता। मृत्यू अंध जीतत जो खेता॥
सूरा संख और कर्म रेखा। भावी तेज तालुका पेखा॥
अग्नि औ क्रोधित कहिये अंधा। जामें जीव जन्तु सब बंधा॥
परमेश्वर अपबल धर्मराया। पाप पुण्य सबसौं बिलछाया॥
ये सब जम जो निरंजन कीन्हा। लिखना कागज रचकैं दीन्हा॥

छंद।

चित्रगुप्त लेखौ लगावैं वंधु दोई चतुर भले।
लख चौरासी रसन जाकै लखि लगावत कै छलैं॥
लेखा लगावत जीव कौ जब अवधि पूजे आइ हो।
सवा लक्ष प्रमाण बाँध्यो ठग निरंजन राइ हो॥
सोरठा—ऐसा कीन्ह विचार, वारी जगत लगाय कैं।
भूल परो संसार, एक नाम जाने बिना॥

चौपाई।

देख भयङ्कर जम की काया। चौरासी लक्ष जिव डरपाया॥
बिकट रूप देखत जम पासा। सब जीवन भये जो बहु त्रासा॥
सब मिलि कैं तब स्तुति ठाना। सुमरण एकहि आद प्रवाना॥
यहि विधि बिनती हँसन ठानी। तबही भई अधर तैं बानी॥
बानी बिगसत भये उजियारा। जोग संतायन तब पगुधारा॥
आज्ञा कहा पुरुष मोहे कीजे। करब सोई जो आयसु दीजे॥

पुरुष वचन।

हंस दुखित भये काल के पासा। जाइ छुड़ावहु काल की फाँसा॥
कहा करौ जो हारो बोला। बरवस करब तौ सुकृत डोला॥
जोग जीत तुम बेग सिधारौ। भवसागर ते हंस उबारो॥

ज्ञानी वचन।

चले ज्ञानी तब मस्तक नाई। पहुँचे तहँ जहँ धरम रहाई॥
धर्मराय ज्ञानी कहँ देखा। क्रोध भयो जनु पावक रेखा॥
यहँवा आये किहिं व्यवहारा। लोकहि से मोहि मारि निकारा॥
मानेव अज्ञा छांड़िब लोका। यही जान परे तुम धोखा॥
करो संहार सहित तोहे ज्ञानी। मरम हमार तुम कछू न जानी॥

साखी—संहार करौ पल भीतर, कहौं वचन परचार॥
पेलौ मान सरोवरै, बिध्वंसौ द्वीप सब झार॥

चौपाई।

ज्ञानी कहँ सुन धर्मनि आगर। तो कहँ ठौर दीन्ह भवसागर॥
तीनौ पुर दीन्हौं तोहि राऊ। पुरुष आज्ञा आयो धरि पाँऊँ॥
चौरासी लक्ष जीव तोहि दीन्हा। तैं जीवन बड़ सासत कीन्हा॥
आज्ञा पुरुष करौ परवाना। जीव लोक सब करौ पयाना॥
पुरुष बचन मेटे फल पावहु। कियो अवज्ञा लोकसो आवहु॥
सोई करहु रहन जो पावहु। की यहवाँते वेग सिधावहु॥
कै जीवन कहँ दीजे बांटा। बोलहु वचन धर्म तुम छांटा॥

साखी—धरम कहैं सुन ज्ञानी, आज्ञा पुरुष की सार॥
सेवा करत रैन दिन, पल पल सहितबिचार॥

चौपाई।

आज्ञा मान लीन्ह मैं तोरा। अब सुनिये कछुबिनती मोरा॥
सो ना करब जो मोर बिगारा। मागौं बचन करौ प्रतिपारा॥
प्रुरुष दीन्हा मोहे राज बुलाई। तुमही देव जो संशय जाई॥

लीजे हंस जो भक्त परमाना। तीनौं जुग हैं मेरे थाना॥
चौथा जुग तबही उत्पानी। तबहि संम्हार सुनौ हो ज्ञानी॥
कैसे संम्हँरो मोहि समझावहु। की भक्ति जो मोहि सुनावहु॥
कहैं धर्म सुन जोग संतायन। ऐसे हंस न होय मुकतायन॥
हरि मंदर मैं रचो बनाई। तहँवा हंस करत ममनाई॥
जो कोई गम्य न करै बिचारा। सात जन्म लौं चोर हमारा॥
सुन ज्ञानी विहँसित मन कीन्हा। कैसा हरि मंदिर का चीन्हा॥

धर्मराय वचन।

जब मम कन्या भयो प्रसंगा। मनमथ उपज्यौ भयौ उमंगा॥
चल्यौ रुधिर कामिन के जबही। नख रेखा भग उपजी तबही॥
चल्यौ रुहिर ताकौ रज भएऊ। गर्भ प्रसंग अंड तिय ठएऊ॥
तेहि प्रसंग तिय गुण उपराजा। तबतैं अधर निरंजन राजा॥
साखी—ज्ञानी कहैं धर्म सो, यह छल मतौ तुम्हाँर॥
जाकौं मैं चेतावहूँ, सो तुमहीं सों न्यार॥

चौपाई।

विनती तोर करों प्रतिपाला। जुग तीनों जीवन वृर साला॥
चौथा जुग अंश मम आवहि। नाम प्रताप हंस मुक्तावहि॥

धर्मराय वचन।

हे स्वामी वर आयसु होई। कछु मांगों अब दीजे सोई॥
सो न करब जो सब जिव जाई। भवसागर खाली परजाई॥
ऐसा मत ज्ञानी तुम ठाँनहु। आज्ञा पुरुप की तुमहू मानहु॥
पुरुष बोल हारा मोहि पाहीं। सो न करब जो सब जिव जाहीं॥
कहैं ज्ञानी सब मैं मानी। कह्यौ वचन सो करब प्रमानी॥
सतजुग, त्रेता, द्वापर, जाई। कलियुग कौ प्रभाव जब आई॥
चार अंश मैं कीन्हौ थाना। खूंट गहौ तौ नहीं प्रमाना॥

धर्मराय वचन।

साखी—बाँवन,नरसिंह, अंश मम, परसराम बलबीर ॥
रामचन्द्र आगे करौ, तब पुनि कृष्ण शरीर ॥

चौपाई।

कृष्ण देह छाँड़ब मैं जहियाँ। कलियुग चौथा युग होये तहियाँ
तब हम करिहैं बौद्ध शरीरा। जगन्नाथ सरोवर के तीरा ॥
राजा इन्द्रदवन परवाँना। मंडप काम लगावैं तवांना ॥
मंडप तास उठन नहिं पाई। सायर उमंग खसावन आई ॥
तब ज्ञानी पूछैं यह बाता। तोहि ते उपजै सायर साता ॥
जगन्नाथ तैं कष्ट बनाई। सायर कवनहुं भाँति खसाई ॥
हँस्थो धर्म कहि सतौ अपाना। कहौं करतूत सुनौ परिवाना ॥
दैत्य अनेक जीव जो मारौं। अंश मोर तेही जाय सहारौं ॥
राम रूप जब होय हमारा। तिनसौं होइ है द्रोह अपकारा ॥
दैत्य अनेक जीव को फेरा। वालि बधे औ सायर तेरा ॥
वालि बैर मैं तुरत दिवायव। व्याधि फाँसी सौं कृष्ण मरायव॥

साखी—सायर बैर ना पावई, करि है वाऊ सौं घात ॥
मंडप उठन न पाइ है, जातैं कहो अस बात ॥

चौपाई।

हे ज्ञानी अस मतौ बिचारहु। प्रथमहि सागर तीर सिधारहु ॥
मोहिं थापहु मैं करहुँ निहोरा। तातें भाव जरै नहिं मोरा ॥
मंडप उठे अटल होय राजू। पुरुष बचन कहं तुम कहं लाजू॥
पहिले थापहु मो कहँ ज्ञानी। सागर तीर बैठहु अन्तर्यामी ॥
कहै जोग जीत सुनो धर्मराई। पुरुष बोल मेटा नहिं जाई ॥
सतजुग त्रेता द्वापर माहीं। तीनौं जुग अंश मोर जहँ जाहीं ॥
कोई कुल हंस शब्द जो पावई। तीनौं जुग जीव थोरा आवई ॥
कलियुग मोर मनुष्य शरीरा। जा कहँ सुनियों नाम कबीरा ॥

जो जिव नाम शरण गति आवै। होय निशंक लोक कहँ जावै॥
और इकोतर नामहि पावै। तुम कहँ जीत हंस घर आवै॥
मागयो वचन करौं प्रतिपाला। जुग तीनौं जीवन बरशाला॥
जातें पुरुष वचन अब हारा। करौ सो बचनन कौ प्रतिपारा॥
साखी—जगन्नाथ मैं थापब, जायब सायर तीर॥
हंस लोक लै आएब, देह जब धरब कबीर॥

चौपाई।

यहि प्रकार आयो ज्ञानी जबहीं। मार्यो तुरत बांध कैं तबहीं॥
कियो अवज्ञा गरस्यो नारी। मान सरोवर तैं मार निकारी॥

धर्मराय वचन।

हे स्वामी मैं कहौं विचारी। रोकौं न हंस जो शरन तुम्हारी॥
जो कोई जीव जो होय तुम्हारा। अपने कांध उतारौं पारा॥
साखी—यह चरित्र सब ज्ञानी, कीन्ह धरम के पास॥
जाय कह्यो तब पुरुष सौं; सुख सागर कीन्ह निवास॥

चौपाई।

अभैपक्ष ज्ञानी कौ द्वीपा। तहँ सत्ताईस द्वीप समीपा॥
तहँ की काल खबर नहिं पाई। तहँ न सतावै काल अन्याई॥

धर्मदास वचन।

धरमदास तब कीन्ह प्रमाना। अगम अपार सुनै यह ज्ञाना॥
हे स्वामी यह कहौ बुझाई। कौन मते अब सृष्टि बनाई॥
सो विरतंत कहौ समुझाई। जिहिं तैं मन की संशय जाई॥
तुम्हरे वचन मोहि सार गुसाईं। सुन हर्षब धन रंक की नाईं॥

साहेब कबीर वचन।

कहैं कबीर सुनौ धर्मदासा। जस कन्या कछु कीन्ह तमाशा॥
तीनौं अंड भये तिय वारा। ताके रूप भये अधिकारा॥

रजगुन भये ब्रह्मा उतपानी। सतगुन भाव विष्णु को जानी॥
तमगुन भाव रुद्र का लेखा। तीनौं गुन तिय अंड विशेषा॥
जब देवी तिन सुत उतपाने। धरमराय निद्रा अलसाने॥
सोवत चार युग गय विती। इक युग प्रथम अंड सौं प्रीती॥
उठि जागै कोई ज्ञान न भेदा। ताकी स्वांस तैं चारौं वेदा॥
स्तुति बेद कियो पुनि तहँवां। चतुर रूप विधाता जहँवां॥
मीन रूप जो कीन्ह बनाई। तीन छोड़ि रह चौथे ठाई॥
जो तुम संशय करहु धर्मदासा। बेद चारित्र अब कहौं प्रकाशा॥
कुर्म्ह घाव कियौ काल अन्याई। बुंद प्रसेद तहाँ पुनि पाई॥
एक बुंद धरती परगासा। दूसर बुंद घट माहिं निवासा॥
बुंद प्रभाव वेद भये ताही। ऐसे बुंद की उतपति आही॥
और चरित्र जस कीन्ह भवानी। सो अब तुमसौं कहौं बखानी॥

साखी—तीन देव जब ऊपजे, ब्रह्मा विष्णु महेश॥
कर जोरे स्तुति करें, तैं अब कहौ संदेश॥
आज्ञा कह मोहि माता, सोइ कहौ समझाइ॥
सोई करब हम निहचै, बोले तीनौ राइ॥

भवानी वचन—चौपाई।

ब्रह्मा करहु तुम सृष्टि उरेहा। जातें जीव धरैं सब देहा॥
कैसे करहिं सो युक्ति बतावहु। क्रिया करहु जानि मोहि दुरावहु॥
सतगुन पहिले भयो उतपानी। तैतिस कोटी देव बखानी॥
रजगुन, तमगुन अंड जो भयऊ। दैत्य अनेक तबहिं निरमयऊ॥
दैत्य देव सौं होय संग्रामा। जो मैं कहौ करब सो कामा॥
जाय खनावहु सागर साता। जातैं दैत्य न करैं उतपाता॥
सागर नीर करौ उतपानी। जाते दैत्य गति रहै भुलानी॥
रचौ सिन्धु जल होय अपारा। तब कहि हौं आगिल व्यौहारा॥

चल्यो ब्रह्मा मातहिं सिरनाई । सोच रह्यो कस करब उपाई ॥
बहुतक जने परिश्रम कीन्हा । चलो प्रस्वेद सोई पगु चीन्हा ॥
साठ सहस्र बुंद अनुसारी । बुंद प्रभाव सबै नख धारी ॥
नख धारिन स्तुति अनुसारा । कहा करैं सुनु पिता हमारा ॥

ब्रह्मा वचन ।

साखी–खनहू सिन्धु मम बचन इम, मंत्र कहौं समुझाय ॥
माटी उठे जु खनत महँ, ता कहँ घालिब खाय ॥

चौपाई ।

चतुर रूप कीन्हा तिन चारी । कहौ नार सबतें अधिकारी ॥
रचो सिन्धु कछु लागि न बारा । सागर सात रच्यो विस्तारा ॥
सागर नीर जब भयो प्रकाशा । नख धारिन तव काल गरासा ॥
सायर रचि ब्रह्मा अनुरागा । अड़सठ तीरथ रचन तब लागा ॥

साखी–गंगा यमुना सरस्वती, गोदावरी समान ॥
रची नदी तब गंडकी, जहँ तहँ शिल उतपान ॥

चौपाई ।

सालिग्राम गंडक अंकूला । पांहन पूजत पंडित भूला ॥
और नर्मदा नदी गोदावरी । सोनभद्र पुनि करमनासावरी ॥
और अनेक रच्यो विस्तारा । जातें भूल पर्‌यो संसारा ॥
सिन्धु सम्हार गये देवी ठांऊ । चतुर मुख आन गहे तब पांऊ ॥
हे माता आज्ञा तुम मानी । रच्यो सिन्धु तुव बचन प्रवानी ॥

भवानी वचन ।

मथौ सिन्धु सुत कहा हमारा । वहि म पैहो कामिनि वारा ॥
तीनों जनैं चले सिर नाई । मथन सिन्धु कस करब उपई ॥
पर्वत आँनि मथनियां कीन्हा । फनपति लेइ फाहरी दीन्हा ॥
मथतहिसिन्धुमतौ असकीन्हा । आपन अँश उतपानहिं लीन्हा ॥

अंश बारि महँ पाये जबही। कन्या तीन उत्पन्न भई तबही॥
पाय कन्या तब भये आनन्दा। देवी पास चले तिय संगा॥
ले कन्या तब आगे कीन्हा। कर जोरें प्रणाम मन दीन्हा॥

साखी—हे माता यह कन्या, पायो सिन्धु मझार॥
जस कछु आज्ञा कीजिये, तस कछु करब बिचार॥

भवानी वचन—चौपाई।

कह भावनि सुन ब्रम्ह कुवाँरा। कामिनि के तुम सदा भरतारा॥
सावित्री ब्रम्हा कहँ दीन्हा। लक्ष्मी कृपा विष्णु पर कीन्हा॥
पारबती रहि संकर पांहीं। अटलअहिबात करचोभव मांहीं
पायो कामिन भयौ हुलासा। बहुरि विनय कियो देवी पासा॥
हे माता तुव आज्ञा सारा। जो कछु कहौ सो करौ बिचारा॥
कह भवानि सुन ब्रम्ह कुवाँरा। जाइ मथो अव सायर खारा॥
पइहौ वस्तु सो आनहु जानी। अस कछुबोली आदि भवानी॥
चले देव त्रिय लाग न वारा। मथ्यो सिन्धु करि हर्ष आपारा॥
पाये बेद ब्रम्हा सो लीन्हा। विष्णु भाव सो हम हू चीन्हा॥

साखी—चार वेद ब्रम्हा लिया, अमृत विष्णु सम्हांर॥
मथे अनिल जो विष भया, सो लीन्हा त्रिपुरार॥

चौपाई।

यह चरित्र त्रय देव बनावा।यहि सुधि दैत्य सुनै जब पाया॥
आइ कीन्ह सब बाद बिबादा। पाइहु बस्तु देहु मोहिं आधा॥
बेद अनिल बिप सब तुम लेहू। सुधा आहि सो हम कहँ देहू॥
कहैं विष्णु सुन दैत्य अधीरा। सदा खाइ कर सिपति शरीरा॥
दोनों मिल अस कीन्ह विचारा। सब मिल खईये अमृत सारा॥
दोई पांति बैठे भल जोरी। दैत्य देव तेतीस करोरी॥
विष्णु चरित काहू नहिं जाना। वांटत अमृत छल जो ठाना॥

साखी–देवन अमृत पानयौ, काहु न कीन्ह प्रसाद ॥
बांटत राहू तब ग्रस्यो, चन्द्र भानु कियो बाद ॥

चौपाई ।

जब सब मिलिकैं आनसु पाई । सभा बैठ कैसे कै खाई ॥
सुनकैं विष्णु क्रोध तब कीन्हां । चक्रमार राहु सिर छीना ॥
अमृत परचो ताहि के पेटा । शीस के राहु देह सो केता ॥
भयौ युद्ध दोनौ दल भारी । बहुतदिन लरे जो बैर सम्हारी ॥
चन्द्र भानु जो राहु मुरावा । ग्रासै जान बैर को भावा ॥
यह चरित्र भयो सागर तीरा । देवी पास चले त्रय वीरा ॥
तब देवी अस मतौ बिचारा । रचहु सृष्टि जग होइ उजियारा ॥
अंडज माता कियौ उतपानी । पिंडज भाव ब्रम्हा को जानी ॥
ऊष्मज विष्णु कीन्ह व्यवहारा । शिव कीन्हौ रोम अठासी धारा
लख चौरासी योनिन कीन्हा । आधा जल आधा थल दीन्हा ॥

साखी–जलके जीव पताल सब, औ पृथिवी परचंड ॥
रचो अहार शंभू सबै, वनस्पती कौ अंग ॥

चौपाई ।

स्थावर महेश जो कीन्हा । उष्मज दोइ तत्त्व कर चीन्हा ॥
तीन तत्त्व अडंज में दीन्हा । चार तत्त्व पिंडज कौ कीन्हा ॥
मुक्ति क्षेत्र नर कौ अवतारा । ता महं पांच तत्त्व है सारा ॥
और जो इन में वरतै भाऊ । मनुष्य जनम में प्रगट स्वभाऊ ॥
मनुष्य जन्म उत्तम सो होई । विना नाम पुनि जाइ बिगोई ॥
स्वासा सार तैं वेद जो भएऊ । सो पुनि मीन पास लै धरेऊ ॥
एकहि सुरति तब ब्रह्मा पावा । तेहि पढ़िबे को मन चितलावा ॥
वेद पढ़त बूछ अस परेऊ । पृथ्वी अकाश जोत अनुसरेऊ ॥

साखी–निराकार निरंजन, सृष्टि कीन्ह उतपान ॥
मैं जानौं भल मरम अब, नहिं कीन्ह्यो आदि भवान ॥

चौपाई।

चल ब्रह्माँ माता पर आये। दोई कर जोर कैं बिन्ती लाये॥
हे माता मैं पूछौं तोही। जो बूछौं सो कहिये मोही॥
कौन पुरुप मुहि कीन्ह प्रकाशा। सो सब मातु कहौ मोहि पासा॥
कहे भवानि सुनु ब्रह्म कुवाँरा। पृथ्वी अकाश मैं ही अनुसारा॥
मैं कीन्हा दुतिया नाहिं कोऊ। तुम कस भूले सो कहु भेऊ॥
हे माता मैं बेद बिचारा। है कोई शून्य में सिरजन हारा॥
निरंकार निरंजन राया। ज्योति अपार श्रुति गुण गाया॥
साधु २ कहि आदि भवानी। आँदि पुरुष जिहि तैं उत्पानी॥
कहां अहै सो मोहि बताओ। कृपा करो जिन मोहि दुराओ॥

साखी–चरण सप्त पताल हैं, सात स्वर्ग हैं मांथ॥
पुहुप लैकर परसौ, जामें होहु सनाथ॥

चौपाई।

चले ब्रह्म मातहि शिरनाई। उत्तर पंथ सुमेरुहि जाई॥
जाइ ठाढ़ भये तिहिं अस्थाना। शुन्य आदजहाँ शाशिनहिंभाना
बहु बिधि स्तुति ब्रह्माँकरई। ज्योति प्रभाव ध्यान अस धरई॥
दुखितसुत जो भई तुम्हारि। स्तुति करत भये जुग चारी॥
यह विधि बहुत दिवस चलि गएऊ। आद भवानी मन चित ठएऊ॥
जेठा पुत्र जो ब्रह्म कुवाँरा। कहाँ गयो वह पुत्र हमारा॥

साखी–अब मैं करब उपाय सो, जिहिं तैं ब्रह्मा आय॥
गायत्री उतपानऊ, ताहि कही समुझाय॥

चौपाई।

ब्रह्मा गये पिता के ठांई। पिता दरश अजहूँ नहिं पाई॥
बहुत दिबस भये बेग लै आवहु। बहुत भांति कर तिहिसमझावहु
चलि गायत्री ब्रम्हाँ पासा। तिनसौं जाइकर बचनप्रकाशा॥

पुहुप लैकर दरशन आएहु। पिता दरश अजहूं नाहिं पाएहु॥
ब्रह्मा कहै कवन तैं आही। मोर मरम पाये किहिं पाही॥

गायत्री वचन।

आदि भवानि मोहि उपजाई। तुमहि लैन को यहां पठाई॥
चलहु बेगि जिन लावहु बारा। तुम बिन सृष्टि न हो अनुसारा॥
कहे ब्रह्मा कैसे मैं जाऊँ। पिता दरश अजहूं नहिं पाऊँ॥
एक उपाय चलौ सुनु बाता। तो कहँ बात पूछि है माता॥
मोरे हित कह झूठ स्वभाऊ। तो तुव संग अब धारौं पाऊ॥
गायत्री कहँ आयसु होई। पुन परमारथ है बड़ सोई॥

साखी—चलु ब्रम्हा माता पर, होवै सृष्टि उपाय॥
झूठ बचन मैं भाषि कै, जाय सुनाइब माय॥

चौपाई।

चलि गायत्री ब्रह्मा साथा। माता प्रेम सौं चूम्यौ माथा॥
कुशल प्रभाव सों चूम्यौं शीसा। और मातु दियो बहुत अशीसा॥
कैसो भयो तहां तोहि भाऊ। सो सब ब्रह्मा मोहि सुनाऊ॥
ब्रह्मा कहै सुनौ हो माता। यह पूछौं गायत्री बाता॥
गायात्रिहि आज्ञा भई जबही। अचरज बात कही कछु तबही॥
परस पहुप लै पितु ही माथा। देखो सबै रही मैं साथा॥
आदि भवानि वहुत बिहँसानी। दोई झूठ कही सहिदानी॥
ज्येष्ठ पुत्र मम ब्रह्म कुँवारा। बहुत झूठ तिन वचन उचारा॥
ब्रह्महि शाप दियो तब जानी। होहु अपूज्य कहि आदिभवानी॥
औ कमलकेतकी असअविश्वासा। निरधिन ठौर तोर होइ वासा॥
गायत्री होइ वृद्ध भरतारा। पांच सात औ बहुत पसारा॥

साखी—शाप्या ब्रम्हा गायत्री, फिर पाछे पछताय॥
क्रोध क्षमा नाहिं कीन्हेऊ, अब कस करे निरंजन राय॥

चौपाई।

ततक्षण भई आकाश तैं वानी ।नहिं भल कीन्हो आदि भवानी॥
ऊँच होइ जो नीच सतावे। ताकर बैर मोहि सन पावे॥
लेहुं बैर सुन कहा हमारा। तोरे होइ हैं पंच भतारा॥
सतयुग त्रेता जैहैं जबही। द्वापर को प्रभाव होय तबही॥
राजा द्रुपद घर तो अवतारा। द्रौपदी नाम तोर उजियारा॥
पांडव होइ हैं कंत तुम्हारा। निश्चय मानहु कहा हमारा॥
शाप वैर देवी जब पावा। सोच करै मन में पछतावा॥

साखी—सोच करौं कह अब मैं, दुर्ग निरंजन राइ॥
आइ परी बस अधम के, विष्णुहि देखौ जाइ॥

चौपाई।

सुनहु विष्णु तुम कहा हमारा। वेर गमन कर सप्त पताला॥
जाय पिता कर परहू पाऊँ। सो सब विष्णु तोहि समुझाऊँ॥
अच्छत पूजा लियो कर जोरी। पताल पंथ की अगम है डोरी॥
चलत जात कछु अंत न पावा। शेष नाग विष गरल स्वभावा॥
विप के तेज विष्णु कुम्हलाना। येहि चरित्र निरंजन जाना॥
स्वान शरीर भय विप के ज्वाला। भइ अकाश बाणी तत्काला॥
सुनहु विष्णु तुम कहा हमारा। विपम पंथ है सप्त पतारा॥
प्रथम पतालको है अस ज्वाला। आगे होई तोर जिव काला॥

साखी—फिरयो विष्णु परमान इमि, कह ज़ो दियो समुझाय॥
मध्य पन्थ है दारुन, कैसे परसौ पाय॥

चौपाई।

गरल भाव उर स्यामल अंगा। ताकर बैर कहौं परसंगा॥
जो को करै जीव वरियाई। दुर्ग राइ तिहि बैर दिवाई॥
सतयुग त्रेता गत हो जबही। द्वापर को प्रभाव हो तबही॥

विष्णु भाव पुनि कृष्ण शरीरा । नाथहि काल कालिन्दी तीरा॥
जो कछु विष्णु पतालहि सुना । देवी पास कहौ सतगुना ॥
सुनकर देवी बिहँसत भयऊ । विष्णु अशीष बहुत कै दियऊ ॥
सत्य बचन तें भयौ हुलासा । लेउ अशीष विष्णु मोहि पासा॥
जहँ लग जीव जन्तु उतपानी । सब पर विष्णु तुमहि परमानी ॥
तीनों पुर में आन तुम्हारी । बचन मोर सुनु सत्य मुरारी ॥
साखी—यह चरित्र कर देवी, चली जो शिव के पास ॥
कर जोरे स्तुति करै, कीन्हौं बहुत हुलास ॥

चौपाई ।

दोइ पुत्र को मतौ सुनावा । मांगु महादेव तुव मन भावा ॥
मांगौ सो जो कीजो दाया । यह नहिं बिनसै हमरी काया ॥
बैसे होहु सुनो हो वारा । साधौ जोग जो मतौ अपारा ॥
जब लग पृथ्वि अकाश पतारा । तब लग काया न बिनसै तुम्हारा
ब्रह्मा बिष्णु तजैं शरीरा । तैंतिस कोट देव रनधीरा ॥
जब लग चन्द्र सूर्य औतारा । विनसैं न देह सुनु कहा हमारा ॥
तीनों पुत्र को कीन्ह सन्माना । तब माता अस आज्ञा ठाना ॥
रचौ सृष्टि तुम तीनौं भाई । प्रथमहि कैसे युक्ति बनाई ॥
नर नारी कीन्हौं दोई देहा । तातें उपज्यो मदन सनेहा ॥
दश द्वारा सुर नर मुनि कीन्हा । धरती भार भए अकुलीन्हा ॥
साखी—दशौं दिशा तब निरमयो, भयो मनुष्य अपार ।
पृथ्वी भई तब व्याकुल, सहि न सकै अस भार॥

चौपाई ।

गौ रूप हो बसुधा गयऊ । विष्णु स्थान ठाढ़ पुनि भयऊ॥
हे स्वामी भयो मनुष्य अपारा । मोर अंग बल सहि न सम्हारा ॥
चलत पंथ नाहिं भुमि अड़ाही । माथे पर लै हाथ चढाही ॥
सुन कै विष्णु समाध लगावा । निरंकार सौं स्तुति लावा ॥

अहो पुरुष का करब उपाई। पृथ्वी भार बहुत अकुलाई॥
ततक्षण भई अकाश ते वाणी। सुनहु विष्णु कर सब की हानी॥
शिव विहाय चौदह सुत मोरा। इनैं छांड़कर शंकर ओरा॥

साखी—जाहु पृथ्वी घर आपने, करौं चरित अब सोय॥
भार उतारो मही कौ, आज्ञा अस जो होय॥

चौपाई।

चली आय वसुधा निज गेहा। जमन विष्णु तब कीन्ह सनेहा॥
मारहु जारहु अव जिव जन्तू। सुन अंतक सुख भयौ अनंतू॥
आई पावक तव रखना लीन्हा। सब जिव मार विष्णु कह दीन्हा॥
मारे देव तैतीस करोरी। ब्रह्मा मार मही सब घोरी॥
कीन्हो युग निकंद भयो जवही। जुग निकंद विष्णु कियौ तबही॥
सब जीव घाल आप में लीन्हा।प्रथम स्वभाव जमन तव कीन्हा॥

साखी—सवा लक्ष जीव विष्णु ते, चले जात नित नेम॥
जस अनाज की कोठरी, करि कृपानु बहु प्रेम॥

चौपाई।

ले अनाज कोठी वहरावै। खरच लेइ पुन फेर मुदावै॥
अस चरित्र कियो अंत कराऊ।अब कछु भाखौं अगिल स्वभाऊ॥
विष्णुहि सैं सतभाव जो देखा। छांडों अंश करौ सृष्टि उरेहा॥
सतगुण भाव विष्णु कौ जानी। नाभि कमल ब्रह्मा उतपानी॥
ततक्षण ब्रह्मा गयौ अकाशा। विष्णु ध्यान अस बचन प्रकाशा॥
येहो स्वामि निरंजन राया। वसुधा कैसे करौं उपाया॥
बारी सहित मही जो बोरी। प्रगट करन की युक्ति है थोरी॥
रजगुन भयो जो ब्रह्मा निवासा। ताकी नाभि से पवन प्रकाशा॥
तीनों गुन तिय अंड जो भएऊ। दैत्य देह तिन दोनों धरेऊ॥
उठि ठाढे नहिं पावहिं थाहा। गये जहां तहँ प्रभु अवगाहा॥

करहिं युद्ध बहु भुजा पसारी। वे दोई बांह विश्नु भुजचारी॥
बहुतक दिवस युद्ध जो कीन्हा। तिन पुनि ऐसो बोलहि लीन्हा॥
मांगहु विष्णु देव मोहि सोई। मैं भय छल भाखौं अव सोई॥
मधु कैटभ तुम दैत्य अपारा। अवश्य होहु तुम वंध्य हमारा॥
होहु वंधु जहँवा जल नाहीं। दोनों गये विष्णु के ठाहीं॥
यहै चरित्र विधाता कीन्हा। तेजय जलसबसिंधु महँदीन्हा॥
तबहि कियो पुन सप्त पतारा। मीन रूप वसुधा अनुसारा॥
तेजय जल सब सिंधुमदएऊ। उनचास कोट मेदनी ठएऊ॥

साखी—तहां बैठ जो दैवत, जब भयो पृथ्वि प्रचार॥
तीन देव विन्तीकरैं, कीजै सृष्टि विचार॥

चौपाई।

प्रथमहिं सतयुग कीन्हौं थाना। कीहौं जीव जन्तु उतपाना॥
सत्यदेह पुनि भयल कुमारी। यह प्रकार रचना अनुसारी॥
बड़वा नाल अग्नि परकाशा। सो तीनौं पुर कीन्ह निवासा॥
कीन्ह्यौ ऋषि सब सहस्त्र अठासी। नौई नाथ सिद्ध चौरासी॥
कीन्ह्यौ देव प्रथम परगाशा। ये सब कीन्हें अपने आशा॥
और अनेक राजा सब कीन्हा। यह चरित्र काहू नहिं चीन्हा॥
यहि करण मारहिं उपजावहिं। आप स्वारथी जीव हतावहिं॥

छंद।

नहिंबूझ परत अपार महिमा सुरत ऐसी बिध कियो॥
बाज लगावहिं भावहू सव जीव जम के वश रह्यो॥
तुम बूझि देखो चरित्र वाको जन न कोई बूझई॥
सेवा करत सब स्तुति यम जीव को अटकावहई॥
सोरठा—सुनु धर्मदास सुजान, नाम गहौ चितलाय कै॥
शब्द गहौ परवान, विना नाम नहिं मुक्ति फल॥

धर्मदास वचन—चौपाई।

धर्मदास विन्ती अनुसारी। हे स्वामी तुम्हारी बलि हारी॥
अब मैं पायो भेद तुम्हारा। मोर मनोरथ करौ प्रतिपारा॥
पृथ्वी केर चरित्र सुनावहु। जन्म जन्म के भाव बतावहु॥
जग समीप हरि को विस्तारा। तुमकछु स्वामी अगम विचारा॥
आदि अंत बूझौ प्रभु राया। अब गुरु कहौ गहौं तुव पाया॥

साहिब कबीर वचन।

सुन धर्मन मैं तोहि बुझाऊँ। हरि चरित्र सब तोहि सुनाऊँ॥
दैत्य महा बलि भये अपारा। यज्ञ अश्वमेध कीन्ह विस्तारा॥

बलि चरित्र।

बलि भयो दानी महां प्रचंडा। स्वर्ग पताल महि नौ खंडा॥
जो जांचैं तिहि देय तुरन्ता। जांचय फिर आवै हरन्ता॥

छंद।

जाचक भयो जो धनीबहुबिधि दीन्ह नहिं कोई जगरह्यो॥
पाइ मुक्ती बर अवराध्यौ दैत्य ऐसो वृत गह्यो॥
शुक्र मंत्री मंत्र ठान्यो अश्वमेध यज्ञ जो कीजिये॥
मुक्ति बर पावै नहीं तो स्वर्ग बरवस लीजिये॥
सोरठा—अश्वमेध रचि राज, जान महाफल मुक्ति कर॥
करब स्वर्ग कर राज, इन्द्र करब बस आपने॥

चौपाई।

जानी तीन लोक के भूपा। तब पुनि कीन्हों बावन रूपा॥
तौन रूप धरि गये पताला। जहँ वाँ बल राची यज्ञ शाला॥
प्रतिहारै तब बात जनाई। है दुज ठाढ़ सुनौ बलराई॥
महा पंडित मुख वेद उच्चारा। आज्ञा कहा सो कहौ भुवारा॥
सुनतहि बलि अब धारे उपाऊ। अर्घ पाबड़े कीन्ह बनाऊ॥

नमस्कार कर पूछी बाता। आज्ञा कहा सुनौ तुम दाता॥
मागौं सो मोहि दीजै राऊ। दानी सुन आएउ तोहि ठाऊ॥
मोहि देव मागौं जो स्वामी। महा पंडित तुम अन्तर्यामी॥

छंद।

परनकुटी छावन चहौं महि देव तुम बलराइ हो॥
पग तीन मांगों नापतै जामैं होय अटाव हो॥
सुनि विहँसे बलिराय तबहीं अहो विप्र माँगौ कहा॥
हीरा रत्न मानिक पदार्थ छांड़ महि में क्या रहा॥
सोरठा—मांगौ थोरा दान, यही रुचि मोहि सुन नृपति॥
प्रथम वचन परमान, तृष्णा स्वारथ निधि कहौ॥

चौपाई।

शुक्र मंत्रि सुन शीश डुलावा। हे नृप दान मोहि नहिं भावा॥
राजा सुनत क्रोध तब कीन्हा। बूझि बोल मंत्री मतिहीना॥
लीन्हा नृपति हाथ कुशपानी। कीन्ह सङ्कल्प मही दियौ दानी॥
मानहु विप्र वचन परवाना। लेव तहां जहँवाँ मन माना॥
तीनौं पुर तीनौं पग कीन्हा। प्रगट हरि तब सबहिन चीन्हा॥
देव पूरा नृप आधा पाऊँ। नातर जाय पुण्य परभाऊ॥
लेव नापि प्रभु पीठ हमारी। तातैं विष्णु वाक्य मैं हारी॥

छंद।

नाप दीन्हीं पीठ अपनी वलि नृपति बड़ राइहौ॥
बाचा व्रत में बांधि राख्यो लक्ष्मता पैठाय हो
विश्वास दीन्हा मुक्ति कौ भरमाइ राख्यो तेहि हो॥
यही भांति प्रपंच कीन्ह्यो तपी सिद्ध सबहि हो॥
सोरठा—बूझो संत सुजान, हरि दीन्हा जस मुक्ति फल॥
पछतइहो अंत निदान, एक नाम जानेबिना॥

सनक सनंदन चरित्र।

चौपाई।

सनक सनंदन चले हरषाई। पुर बैकुंठ सुमेर पर जाई॥
जयरु बिजय दोइ रहैं प्रतिहारा। रोकि न तेहि न दीन पैठारा॥
सुनिकै क्रोध ऋषी तब कीन्हा। जयरुबिजयकहँशाप जो दीन्हा
होऊ दैत्य तुम दोनों भाई। जाई रहौ मृत्यु मंडल ठाई॥
सुनिकै शाप दोनों गए जहँवां। हरि बैठे लक्ष्मी सँग तहँवा॥
कहिनजाइ तिहिऋषिकर भाऊ। सुनकर विष्णु कीन्ह पछिताऊ॥
थोरी चूक शाप बड़ दीन्हा। नाहिं भल कीन्ह अवज्ञा कीन्हा
ऋषिन बुलाय कही अस बाता। है परभाव वैर कर घाता॥
साखी—जय रु विजय कहँशापेऊ, होहू दैत्य प्रभाव॥
ताको सुत तुम होहु अब, शाप को बदलौ पाव॥

चौपाई।

अब स्वामी तुम बचन प्रमाना। मो कहँ देव भक्ति भगवाना॥
जय अरु बिजय काल वश भयेऊ। तिन कौ जन्म मनुष्यहि ठएऊ
हिरनाकुश वा हिरनाक्ष राऊ। कीन्ह सेवा बहु शंभू ठाऊ॥
पा बरदान भये बलवंता। नाहिं कोई देव यक्ष गुणवंता॥
सोई आन पुनि कीन्ह संग्रामा। भाजे देव छाड़ि सब धामा॥
साखी—तब प्रपंच हरि कीन्हा, अस ठाना व्यवहार॥
ताकी नार औवान रहि, भयौ पुत्र अवतार॥

चौपाई।

हिरनाकुश जब भये हरषंता। चले असुर घर जन्मो पूता॥
सेवकन दीन्हें रतन पदारथ। शिव सुत दीन्ह जन्म मम स्वारथ
बर्ष पांच को भयो जो बारा। गुरु बुलाय पढ़ने बैठारा॥
शिव की भक्ति तुम याहि पढ़ावहु। माँगहु इच्छा सो फल पावहु॥
लै घर विप्र गये तब वारा। पढ़ौ सु सुत शिव भक्ति बिचारा॥
प्रहलाद शिवकी भक्ति जो धरहू। हरषे नृप मम बिथा बिसरहू॥

साखी–केतौ गुरु प्रबोधै, शिव न पढ़ै प्रहलाद ॥
विष्णु २ गुहरावई, सुन गुरु करै विषाद ॥

चौपाई ।

एक वार नृप सभा मझारी । बैठे सुत कहँ कीन्ह गुहारी ॥
गये प्रतिहार ले आए बारा । गुरु समीप पढ़ने बैठारा ॥
हर्षत चूम्यो सुत कौ शीसा । सकल सभा दियो तहुब अशीसा
सुत मोही कछु पाढ सुनावहु । कहौ बचन मम हृदय जुड़ावहु ॥
तब प्रहलाद पढ़न अनुसारा । धन्य विष्णु जिन कायसम्हारा ॥
पानी तें जिन पिंड बनावा । तिहिं प्रभु को कोई अंत न पावा ॥
अलख निरंजन देव मुरारी । सुनौ तात मैं तुव बलिहारी ॥
सुनत बचन हिरनाकुश राऊ । क्रोध कीन्ह जस अग्नि स्वभाऊ ॥
साखी–अहो मंद जड़ अकरमी, किमि ठानो मम बार ॥
जाइ पढ़ावहु शङ्कर, नातर झोकों भार ॥

चौपाई ।

दिनदश में पढ़ाइ लैआवहु । शिव कि भक्ति भली भांति सिखावहु
नृप आज्ञा पढ़वे कोः दीन्हा । तब प्रहलादपढ़े अस लीन्हा ॥
हरि तज काहि पढ़ौ मैं ताता । चार पदारथ के फल दाता ॥
भक्ति पक्ष सन्तन सुखदाई । जिन प्रभु सकल सृष्टि उपजाई ॥
तब नृप सुन अस वचन उचारा । मारहु सुत यह शत्रु हमारा ॥
हस्थि बुलाए अति बलवंता । चलत छांहि भुव देइ पदंता ॥
ता कहँ आज्ञा दीन्ह भुवारा । देव महाबल आंकुश भारा ॥
साखी–हस्ति देख प्रहलाद कहँ, चलै पराइ पराय ॥
नरसिंह रूप दिखराय हरि, भक्ति करत मन लाय ॥

चौपाई ।

तब नृप ऐसी युक्ति बिचारी । जरत अग्नि देव सुतकहँ डारी ॥
अग्नि जरत तब पवन उड़ानी । पहलाद पढ़ै तब सारंग पाणी ॥

तब नृप ऐसी युक्ति अरंभा । बांधो सुत कहं गाडो खंभा ॥
जो कोई होय तोर रखवारा । ता कहँ सुमिरो सुन हो बारा ॥
नातर छाड़ु विष्णु कर नाऊँ । अबही घात करों यहि ठाऊँ ॥
तब प्रहलाद सुमिरै भगवाना । कहा तू करब दैत्य बलवाना ॥
अहो धरणिधर अहो मुरारी । यहि औसर प्रभु लाग्यु गुहारी ॥

साखी—खंभा सौं हरि नीकसे, कीन्ह भयंकर गात ॥
आधा नर आधा सिंह का, कीन्ह दैत्य ही घात ॥

चौपाई ।

दोऊ बंधु महा बलि मारा । दैत्य मारि महि भार उतारा ॥
फारयो उदर नखन सौं छीना । सुर औ नरन हरष बहु कीना ॥
मांग प्रहलाद इच्छा फल आजू । तोहि भक्त लग हनौ दैतहिराजू ॥
कर जोरे प्रहलाद अस भाखा । हे स्वामी भक्तन प्रण राखा ॥
मोक्ष पिता कहँ दीजै स्वामी । मोहि भक्ति सुन अन्तर्यामी ॥
साधु २ विष्णु अस भाखा । पुत्र पिता प्रण भल तुम राखा ॥
दोई जन्म आगे औतारब । तब तोर पिता देख मैं तारब ॥
तैं मम भक्ति कीन्ह बड़ि सेवा । ताकर फल भाषौं कछु भेवा ॥
दैत्य हते जब बाल कन्हाई । आवै देव सबै तेहि ठाई ॥
करहिं सुयस हरि सबही बखाना । प्रहलादहि देव स्वर्ग अस्थाना ॥

साखी—कीन्ह इन्द्र प्रहलाद कहँ, सब मिलि कीन्ह बिचार ॥
नरसिंहरूप नर कीन्हा, ताको यह व्यवहार ॥

नारद चरित्र ।

चौपाई ।

एक समय इन्द्र यज्ञ ठानी । निवते सिद्ध ऋषि औ ज्ञानी ॥
पहुचे गन गंध्रव सब झारी । सब मिलि कीन्ह स्नान सुधारी ॥
जो कोई गया इन्द्र अस्थाना । इच्छा भोजन सब कहँ ठाना ॥

बहु बिधि इन्द्र करे सतकर्मा । पुरै न घंट जानस को मरमा ॥
तब नारद अस कीन्ह बिचारा । धरौ धीर कहौ बचन उचारा ॥
ऋषी जमदग्नि इच्छा फल खावा। तिहिं प्रभाव अनंग जनावा ॥
ऋषि रत करैं कै छांडैं ठावा । बजै घंट अस मता सुनावा ॥
सुनतहि ऋषि तब कीन्ह पयाना। बज्यो घंट पूरण यज्ञ जाना ॥

साखी-ऋषि मन में तब बूझ्यो, जान करौ अब ब्याहु ॥
ऋतमान जब आये, राजा कश्यप ठांहु ॥

चौपाई ।

देव नृपति कन्या इक मोही । मागौ आजु जाव नृप तोही ॥
तब कन्या नृप दीन्ह बुलाई । कीन्हौ ब्याह ऋषी तेहि ठाई ॥
लै कन्या ऋषि घरहि सिधाये । भृगु कुल हरि औधानहि आये॥
जो धर्मदास संशय कछु तोही । कहौं बुझाय चरित्र अब वोही ॥
भय क्षत्री महि व्याकुल भयऊ । मारन तासु जन्म हरि लयऊ ॥
निछत्र कीन्ह बहु जीव संहारा । बैर हेतु भृगुकुल औतारा ॥
सहस्रबाहु ऋषिगन जो मारी । पिता बैर सो प्रथम सम्हारी ॥
क्षत्री मार निक्षत्री कीन्हा । भृगु रूप विष्णु को चीन्हा ॥

साखी-यहि विधि क्षत्री निकंदेऊ, परसराम बलि बीर ॥
आगे भाव बतावऊँ, सुनौ संत मत धीर ॥

श्रवण चरित्र ।

चौपाई ।

अवध नगर दशरथ बड राऊ । पुरुषारथ जिन कहौं प्रभाऊ॥
तिनहि नारि बहु सबहि पियारी। रात दिवस जो कर हित भारी॥
एक समय आखेटहिं गये राऊ ।पशु भोरे कियौ ऋषि कहँ घाऊ॥
पानी तट ऋषि हरि २ कीन्हा। नृप पछितानो जब मुनि चीन्हा
ताके पितहि श्रवणकी बाता । तुव सुत दशरथ कीन्हौ घाता ॥

साखी—अहो ऋषि तुव सुत कहँ, दशरथ मार्‌यो बाण ॥
यह चरित्र सुन मुनिवर, ततक्षण छांड्यो प्राण ॥

चौपाई ।

दोनों ऋषी काल बस भयऊ । नृप अन्याय बैर हरि ठयऊ ॥
सुतबिहून जसऋषि तनत्यागा । तैस काल नृप तोर अभागा ॥
पुत्र के शोक काल होय तोरा । देहू बैर कहा सुन मोरा ॥
नारद ऋषि तब कीन्ह तिवाना । राजा दश यज्ञ जो ठाना ॥
देव ऋषी आये तिहिं ठाईं । सब नृप बहुतै सेवा लाईं ॥
ऋषि तब कहै सुनौ दक्षराऊ । शिव को जियत निवत बुलवाऊ
इन्द्र यज्ञ जब निवत जुआये । गण गन्धर्व सब देव रहाये ॥
तहँ शिव कीन्ह तोर अपमाना । आइ कहौ सुन नृपति सुज्ञाना ॥
सुनतहि क्रोध नृप पर जरेऊ । जरत हुताश मनहु घृत परेऊ ॥

साखी—शिव बिहाय सब निवते, चले सबै तिहि पास ॥
देख गगना मुनि वरन को, सती वचन परकास ॥

चौपाई ।

हे प्रभु कहां जायँ मुनि राई । सो प्रभाव प्रभु मोहि बताई ॥
राजा दक्ष यज्ञ जो ठाना । तहां जायँ ऋषि चढे विमाना ॥
हे प्रभु मो कहँ आयसु होई । यज्ञ तात कर देखों सोई ॥
निवते बिन न बूझियत नारी । ऐसी इच्छा आहि तुम्हारी ॥
चली सती तब लागि न बारा । पिता भवन तहँवा पगुधारा ॥
देखत नृपति महा उर जरेऊ । काहू समाधान नहिं करेऊ ॥
व्याकुल भई दिगम्बर नारी । यहीव्याह सम कुल भइगारी ॥
सुनत विषाद सती मन जागा । परी अनल तब देही त्यागा ॥
हाहाकार भयो सभा मझारी । यज्ञ विध्वंस भयो सुनचारी ॥
हिंमचल ग्रह सती अवतरिया । गण दीन्ह नाम पारवती धरिया
यहै चरित्र विष्णु जब देखा । शिव विवाह गुण मनमें पेखा ॥

साखी—शिव समाधि छूटै नहीं, कीन्हौं बिष्णु उपाय ॥
काम भाग परपंच कर, संगहि दीन्ह छिपाय ॥

चौपाई ।

सर समीर लागौ जब अंगा । बाल वृद्ध व्यापौ सब संगा ॥
बार बार सब जग बस भएऊ । ऋषि मुनि व्याति काम जो ठएऊ
नारद ऋषि पारासर दोऊ । भये काम बस मुनिबर सोऊ ॥
तिन कुल व्यासदेव उतपानी । इनहू रति जो बरबस ठानी ॥
पारासर गए सागर तीरा । देख नारि मन धरहिं न धीरा ॥
मछोदरी जा कहँ जग कहई । व्यास देव की जननी अहई ॥
नारद ऋषि किय तहां तिमाना । राजा एक स्वयम्बर ठाना ॥
ता कुल कन्या है कुलबंती । निश्चय व्याह करो जिहि संती ॥
चल ऋपि हरिसों बिन्ती कीन्हा । ब्रम्हा पुत्र कहिं बचन अधीना ॥
हे स्वामी मोहि दीजे रूपा । करि हौं व्याह मोहि रुचि भूपा ॥
विष्णु अपनमन कीन्ह बिचारा । कर परपंच ऋषी सव झारा ॥

साखी—शिव की नारि बनाऊं, सोई करब उपाय ॥
भयो काम बश नारद, बैर देव मम भाव ॥

चौपाई ।

नहिं जाने नारद मतिहीना । वानर कर मुख ऋषि कर दीन्हा ॥
चलो ऋषी मन भयो अनंदा । कृपा कीन्ह मोहि बालगुविन्दा ॥
अवशि जाय हम व्याहैं नारी । जहँ पुनि पहुँचे तहां कुँवारी ॥
दर्पन दीन्हों सभा मँझारी । ऋषि अपनो प्रतिबिंब निहारी ॥
देखत ऋषी क्रोध तव कीन्हा । विष्णु भाव कबहूं नहिं चीन्हा ॥
जव हरि बिहसे नारद पाहीं । सती यज्ञ तुम बूझब नाहीं ॥
परबस देखत मैं तन जारा । अब मैं कीन्हा भाव तुम्हारा ॥

साखी—बूझ परचो नारद जबै, गहे विष्णु के पांय ॥
क्षमा करो अपराध प्रभु, नर कौ रूप बनाय ॥

चौपाई ।

कन्या हाथ लीन जयमाला । नावहु गले गहि चरण गुपाला ॥
शिव बिवाह पार्वती सों कीन्हा । सती हेत तिन भल कै चीन्हा॥
तबही रूप प्रथम कर दीन्हा । दीन्ह शाप विष्णु सुन लीन्हा ॥
अहो विष्णु तुम बैर बिचारा । तुमहू बैर देव व्यवहारा ॥
वसुधा भारहि व्याकुल आही । सुत पुलस्त महा बल ताही ॥
ले अवतार मारहुगे सोई । सो पुन हर तुम्हारा जोई॥
नारद का जस कीन्हौं अंगा । तईसन जाय करौ परसंगा ॥
वर वस बैर लेव सब पाहीं । विधिना रूप बनावै ताहीं ॥
विष्णु अपन मन कीन्ह तिवाना। काके गिरह लेहुँ अवधाना ॥
पूर्व जन्म जो दशरथ राऊ । सेवा कीन्ह यही परभाऊ॥
मागिन तिन फल अंतक बारा । पुत्र होहु गोपाल हमारा ॥
आये नृपति संग त्रैनारी । सेवा कीन्ही यही प्रकारी ॥

साखी—लेव अवतार अयोध्या, दैत्य बधन जो होय ॥
आज्ञा भयी आकाश तैं, करु उपाय अब सोय ॥

चौपाई ।

हिरनाकुश हिरण्याक्षहि मारा ।ताकौ दियो मुनि ग्रह अवतारा॥
मुनि पुलस्त ग्रह जन्मौ वारा । रावन कुंभकर्ण बरियारा ॥
जा कहँ विष्णु स्वर्ग कर राऊ । भक्ति हेतु ता कहँ जन्माऊ ॥
नाम बिभीषण भक्त हरि केरा । जपै विष्णु नाहिं लावै बेरा ॥
नृप कश्यप दुतिया अवतारा । सो तो भयऊ अवध भुवारा ॥
तिन के ग्रह अवतारहि लीन्हा । अपने अंश जार तिन कीन्हा ॥
राजा के ग्रह जन्मौ वारा । ज्योतिष राम बर्ग उच्चारा ॥
जेष्ठ पुत्र कौशिल्या सुतही । राम नाम थापो पुन तबही ॥
सुमित्रा के दोई बालक आंही । लच्छन शत्रुहन भापौ ताही ॥

दोई जन्म सुमित्रा किये सेवा । तातें हरि प्रगटे दोइ भेवा ॥
कैकई सुतहि भरत जो भाखा । विप्रन दीन्ह पदारथ थाका ॥
कौशिक ऋषी आये तेहि ठाई । नृप दशरथ तब हित बहु पाई ॥
बार अनेक दण्डवत कीन्हा । नृप कहँ आशिर्वाद जो दीन्हा ॥
है प्रभु कह आयसु जो होई । कृपा करो जिनराखौ गोई ॥
जेष्ठ पुत्र जो राम सुजाना । ताहि देव नृप हो मम कामा ॥

साखी—नृप बूझौ मन आपने, दिये बनै परकाज ॥
थाती सौपौं पुनि तुमहि, आन देखु मुनिराज ॥

चौपाई ।

राम लषण चले मुनि के साथा । ताडुका बांधि ब्याहब रघुनाथा॥
चले राम लक्षमन मुनि संगा । देख रूप जस कोटि अनंगा ॥
दिक्षा मंत्र दियो ऋषि जानी । दीन्ह जाप कहि अमृत वाणी ॥
ऋषि आश्रम आये रघुराया । यज्ञ शाला मुनिवर बैठाया ॥
दीन्ह तुरन्त तब निर्भय भारा । मुनिकै दैत्य जो करै सम्हारा ॥
आये बीर महा बल भारी । लागी होन परस्पर मारी ॥
मुनिवर आज्ञा दीन्ही जबही । ताडुका दैत्य मार हरि तबही ॥
ताडुका दैत्य राम जब मारा । ऋषि मुनिवर तब कियो यज्ञ शाला

साखी—मिथिला नगरी रहत हैं, रच्यो स्वयंबर राय ॥
चलो राम सो देखिये, मुनिवर संग सहाय ॥

चौपाई ।

चले राम लक्ष्मन राऊ । मिथिला नगर अब धारिये पाऊ
पाहन शिला जबै पग लागा । प्रभु प्रगटे जो खटका भागा ॥
गौतम नारि अहिल्या नाऊँ । ताको हरि पठई निज ठाऊँ ॥
समाचार मिथिलापुर पाये । आदर कै मुनिबर लै आये ॥
समाधान नृपति बड़ कीन्हा । उत्तम मंदिर बैठक दीन्हा ॥

जो कोई आय जान यज्ञ शाला। सब कहँ पोषण कीन्ह भुवाला ॥
पहुँचे अवधि सुदिन दिन आये। राजा नगर महँ ढोल बजाये ॥

साखी—जाके बल बहु होवै, धनुष उठावै सोय ॥
सीता ब्याहों ताहिको, मिथ्या वचन न होय ॥

चौपाई।

चल भई सीता जहँ फुलवाई। देवी पूजन मातु पठाई ॥
आवत राम मार्ग जब देखा। सुफल जन्म आपुन तब लेखा॥
अहो अंबिका आदि भवानी। सुनिये मातु तुम अन्तर्जामी ॥
मोर मनोरथ पुरबो माता। सो बर देव जो मन में राता ॥
बिधि विन्ती सीताकी जानी। ततक्षण भई अकाश तें वाणी ॥
अहो सीता लक्ष्मी अवतारा। निश्चय तोर राम भरतारा ॥
सुनत संदेशा भयो अनंदा। जिमि चकोर पाये निशि चंदा ॥
देवी पूजि गई निज सीता। मनमें हर्ष वहुत धुनि कीता ॥
आई सिय जहँ सृष्टि भुवारा। उठै न धनुष सबै वलहारा ॥
रावन वालि महा बलधारी। उठै न धनुष सबै बलहारी ॥
जव नृप जनक भयौ बिसमादा। उठै न धनुष जन्म मम बादा ॥
तव रघुवर मुनि को शिर नावा। सभा मांझ तब धनुष उठावा ॥
खैंचो राम धनुष चढ़ो जबही। महा अघोर शब्द भयो तबही ॥

साखी—मुनि गण त्याग्यो ध्यान तब, महि मंडल भुई चाल॥
हरण्यो राजा जनक तब, सिया दीन्ह जयमाल ॥

चौपाई।

टूट्यो धनुष धूम भइ भारी। परसराम तब लाग गुहारी ॥
आवत तासु जो नृपति सकानें। बहुत नाम जो सुनत प्रसानें ॥
सभा मांझ आये परसरामा। सब मिलि दंडवत कीन्ह प्रणामा
भृगुकुल कह सुन मिथिला राऊ। टोरयो धनु किन मोहि बताऊ॥

रघुपति कहैं धनुष मैं मापा । तुम किहि काज करत हौ दापा ॥
देखि राम भृगुकुल किय रोषा । मारौं शीस जो करौ सरोषा ॥
बिहंसे राम लखन दोइ भाई । हे द्विज या न करौ सुरमाई ॥
जान बूझि जिन होहु अयाना । मिटै तितिर ऊगै जब भाना ॥
द्विज कुल देख किया परमाना । तातें तुमको भयो अभिमाना ॥

साखी—द्विज कुल धनुष जो आपनो, दीन्ह राम के हाथ ॥
मैं क्षत्री बल भंजन, खेचो हो रघुनाथ ॥

चौपाई ।

खैंच्यो राम तासु धनु कैसा । तृणहि उठाय लेत हैं जैसा ॥
परशराम गहि ताके पाऊ । क्षमा करौ कौशिल्या राऊ ॥
कर प्रणाम भृगु वनहिं सिधारे । रामचन्द्र रहै सभा मझारे ॥
ये जो आहि सो त्रिभुवन राऊ । तिन महि मंडल तेज प्रभाऊ ॥
कहैं सबै हरि को अवतारा । परशुराम औ राम भुवारा ॥
जो निज इच्छा आवत जाई । तौन गर्भ काहे दुखपाई ॥
ऐसा निरंकार परकाशा । सब तें न्यारा सब में वासा ॥
इच्छा कर जस त्रिभुवन राऊ । इच्छा आस करै निर्माऊ ॥
वाजी लगा जीव जो राखा । ताकी भक्ति सबै मिलि भाखा ॥

साखी—कोइ इक ज्ञानी पारखी, परखे खरा और खोट ॥
कहे कबीर तब बांचि हैं, रही नाम की ओट ॥

चौपाई ।

राम लखन के सुनो प्रभावा । मिथिला पति एक दूत पठावा ॥
नृप दशरथ बेगहि चलि आहू । राम लखन कर सुनो बिवाहू ॥
नृप दशरथ बेगहि चलि आएहू । ऋषिन करायवो तहां बिवाहू ॥
चारौं भाई व्याह तिहिं पाहीं । बहुत अनँद कीन्ह मन माहीं ॥
चारौं भाई और भुवारा । लै चलि आये अवध मझारा ॥
तहां आइ बिप्रन दिय दाना । कछुदिनकियैसुखरामसुजाना ॥

भरत गये जहँ जननी ताता। विद्या पढ़ै बहुत हरषता॥
अवध नरेश मता अस ठाना। रामहिं राज देहु मन माना॥
सब मिलि ऐसा मत उपराजा। करब बिहान राम कहँ राजा॥
यह चरित्र जब देख भवानी। समझी निराकार की बानी॥

साखी—मूढ़ मनुष्य न बूझै, राम लीन्ह अवतार॥
मार दैत्य संघारै, लंका के सरदार॥

चौपाई।

सवा लक्ष जीव प्रतिदिन खाई। कौतुक राज बनावत राई॥
अंबिका गई कैकई पासा। हे रानी तुव पति मति नाशा॥
रामहि काल देत हैं राजू। निश्चय ह्वै हैं तोर अकाजू॥
जो वरदियो नृपति तोहि काहीं। सो तुम मागौ आजुहि माहीं॥
भरतहि राज राम बनो बासा। माँगहु आज जो होइ हुलासा॥
गयी कैकई मांगा बर सोई। राम बिछोह प्राण नृप खोई॥
त्याग्यो प्राण अवध नृप जबही। शरवन बैर जन्म लियो तबही॥
चले राम लक्ष्मण सिय साथा। बन मारग लीन्है धनु हाथा॥
व्याकुल लोग नगर के साथा। करहिं शोक धुनहीं बहु माथा॥
रामहिं संग दूर लग जाई। फिरहु राम तुम तात दुहाई॥
सुमंत मंत्री अस वचन सुनाये। पठय दूत तब भरत बुलाए॥
जाइ बुलावहु भरतहि आजू। उन कहँ देहु अवध कर राजू॥
आज्ञा भयी फिरचो सब लोगा। सब कहं भयो राम कर शोगा॥

साखी—भरतहि पठै सँदेश पुनि, तबहि भयो रबि सांझ॥
गये जहां तहां रघुपती, बैठ गये वन मांझ॥

चोपाई।

राम लखन बैठे सिया लाई। फिरहु भरत तुम तात दुहाई॥
फिरहु भरत प्रभु आयसु होई। प्रजा लोग संग सब कोई॥

राम लक्ष्मण औ सिय साथा । वन मारग लीन्हे धनु हाथा ॥
बहु दिन रहै ऋषिन के ठाईं । समाचार लंकापति पाईं ॥
लीन्ह संग मारीच बलवंता । हरै सिया मन हो हर्षंता ॥
मारीचही कीन्ह मृग वेषा । नहिं छल बूझै राम नरेशा ॥
मृग को देख नृपत तब भूला । लोभ मोह को बन जो फूला ॥
प्रगट्यो सांझ अन्ध भो माना । बिगरचो मोह जो ज्ञान छिपाना ॥
राम लखन गए मृगहिशिकारा । सीतहि रावन रथ बैठारा ॥
आगे मारग रोक जटाऊ । मार गयो तिहि रावन राऊ ॥
मारीचहि राम कीन्ह जब घाता । बूझ परी नारद की बाता ॥
सिय हर रावन मार लुटेवा । जाकी जगत करत है सेवा ॥
ढूँढहु लक्ष्मण वन गुहराईं । मोह भयो जब सिया न पाईं ॥
मरीचहि मार राम पछिताना । जवहि जटाऊ कही सहिदाना ॥
हनूमान मिल पंथ मँझारा । रावन मारचो राम भुवारा ॥
[illegible] स्वामी तू त्रिभुवन नाथा । कृपाकरो तुम मोरे साथा ॥
ह[illegible]ान जब कीश अनुसारा । कुशल प्रभाव पूँछ तिहिवारा ॥
वालि सुग्रीव दोइ जन भाई । वालि लीन्ह वध बंधु छुड़ाई ॥
जो प्रभु कीजे कपि पर दाया । मारो बालि सुनो रघुराया ॥

साखी—रामचंद्र अस बोले, कीने बालि कुकर्म ॥
मारौं ताहि पल भीतरै, जान कहौं अस मर्म ॥

चौपाई ।

आए रघुपति जहँ गए राजा । बालि मार सुग्रीव निवाजा ॥
मार बालि कहँ एकहि तीरा । बूझो संत गही नहिं पीरा ॥
यह तो भेद जानिहै सोई । सतगुरु दया जाहि पर होई ॥
तब हनुमान लंक कियो गवना । पहुँचै जाय जहाँ रह रवना ॥
पहुँचै जाय भेट भई सीया । दैत्य देख यह कौतुक कीया ॥

मारहिं कपि कहँ कौतुक जानी । तब हनुमान आप बल ठानी ॥
जारि नगर तब कीन्हों छारा । नगर लोग सब कहैं बिकारा ॥

साखी—आय कहो रघुपति सौं, समाचार हनुवीर ॥
सिंधु बांधि हरि उतरे, दैत्य बधन रनधीर ॥

चौपाई ।

आए कीन्ह दैत्य संग्रामा । मारे दैत्य बहुत तब रामा ॥
कुंभकरन निद्रा सौं जागा । रघुवर सौं युद्ध करै अनुरागा ॥
कहै बिभीषण सुन नृप रावन । आए राम जो असुर सतावन ॥
सिया संग लै जाहु तुरंता । क्षमा अपराध गहु पग हर्षंता ॥
मारी लात बिभीषण भाई । क्रोधित मिलो राम कहँ आई ॥
समाधान नृपति बड़ कीन्हौ । लंका बकसि ताहि को दीन्हौ ॥
कुंभकरण गहि समरं अपारा । ताको हरि बहु बल सौं मारा ॥
इंद्र जीत तब लाग गुहारी । कर अश्वमेध तपस्या भारी ॥
तिन पुनि रोके कपिदल जुथ्था । बिभीषण भेद कहोअज गुथ्था ॥
जोलो पूर्ण जज्ञ ना होई । मारहु राम व धरकै सोई ॥
भयो प्रभात राम जब देखा । लक्ष्मण लाग्यो बान बिशेषा ॥

साखी—मार सो महाबली, मेघनाद जिहिं नाम ॥
सुनत क्रोध रावन कियो, कठिन कीन्ह संग्राम ॥

चौपाई ।

दैत्य महाबल शक्ति संधाना । जूझे लक्ष्मण भया निदाना ॥
तुम हनुमान लै आवहु मूरी । उत्तर दिशा देश बड दूरी ॥
दौनागिर पर्वत कर नाऊ । संजीवन सहित ताहि लै आऊ ॥
सजीवन बास तें लक्ष्मण जागा । हर्ष भये तब कपि कर भागा ॥
तब रघुबीर घेर गढ़ लंका । दैत्यन के जी उपजी शंका ॥
तब रावण गहि समर अपारी । बंधुहि व्याकुल हैं सब झारी ॥

रामचंद्र रावन कहँ मारा । वार अनेक सीस भुइ पारा ॥
मारयो हृदय ताक कै जबही । रावन काल वस्य भयो तबही॥
सीता समाधान हरि कीन्हा । ताको रूप न काहू चीन्हा ॥
सिया लीन्ह रघुवीर बुलाई । राज बिभीषण दीन्ह सुहाई ॥
लै सीतहि अवधपुर आना । भरतहि कीन्ह बहुत सनमाना॥
सीता सती रही अवधाना । गभ वास लौकुश उतपाना ॥

साखी—राज करै रघुवंश मणि, तब अस कीन्ह प्रमान ॥
थाप्यौ कोट अयोध्यहि, सुनौ मंत्र हनुमान ॥

चौपाई ।

जवहि राम लंका से आये । अयोध्या कोट उठावन लाये॥
लक्ष्मण भाइ संग तव लीन्हा।सुदिन जानकै तब निव दीन्हा॥
उठत कोट सो भय अस शोरा। है कछु द्रव्य नीच अस वोला॥
सुन अस बचन राम रघुराई । खनहु खनहु अस आज्ञा पाई ॥
चहुं दिश खनै जो बाजु कुदारा। तपसी एक देख तहँवारा ॥
लुहिड़ा माथै दै तप करई । जोग अरंभ सदा चित धरई ॥
भौंह बार मुख रहे छिपाने । बैठे महि के तले स्याने ॥
देखा ऋषिहि बहुत भय माना । शाप न देई बहुत संकाना ॥
छांड़ि समधि निरखि जब हेरा। राम दंडवत किये चहुंफेरा ॥

साखी—बोले बचन ऋषी तब, कोहौ सो कहु मोहि ॥
रूप भाव बहु आगर, देखों नृप सम तोहि ॥

रामचंद्र बचन—चौपाई ।

दशरथ तनय राम मोहि नाऊं । रहों समीप अवधपुर गाऊं ॥
ऋषि कहो भयो राम अवतारा । पूंछौ यह कह करब भुवारा ॥
हे ऋषि राज मैं कीर्ति बनाऊँ । जातैं रहे यहि जग में नाऊँ ॥
कह ऋषिराज जीवन है थोरा । छांड़ो कोट कहा सुन मोरा ॥

राम कह्यो ऋषि सों निज मर्मा। केते दिवस किया तपधर्मा॥
लोमस ऋषि मोर है नाऊ। अपने जन्म को कहौं प्रभाऊ॥
आठ पहर रात दिन होई। अहो रात कहैं सब कोई॥
दोई पाख कर पहर प्रवाना। सो एक दिवस पित्रन को जाना॥
वर्ष दिवस जब उनको होई। एक दिवस देवन को सोई॥
बारह वर्ष दिवस जब जाना। चौदहसहस्रइकमनु जोबखाना॥
सत्त मनु जबही जाइ बिगोई। तब इक इन्द्र काल बस होई॥
सत्त इन्द्र जब होवै नाशा। इक ब्रम्हा को होइ बिनाशा॥

साखी—सत्तब्रह्मा जब बिनशहीं, तब एक विष्णु कौ नाश॥
सत्त विष्णू जब बीतही, तब इक रुद्र बिनाश॥

चौपाई।

सोरा रुद्र गति जब हो जाई। तब इक रोम मम परे खसाई॥
तातें लोमस नाम है मोरा। करौ समाध जीतब है थोरा॥
सुन रघुवीर अचंभित भयऊ। ऋषिको बचन प्रतीत न लयऊ॥
राम चरित्र ऋषी तब जाना। क्या सोंचौ रघुवीर सुजाना॥
देव अंगुष्ट भेंटहु जो मोही। तैस अंगुष्ठ देऊँ मैं तोही॥
यहै कमंडल मोरे साथा। काढौ गिन जो आवहि हाथा॥
क्रोधित हाथ डार भगवाना। गिनि उनूचास कोट परवाना॥
परचो पाय रघुवीर न जाना। लोमस बचन सत्त कर माना॥
एतिक मुदरी गिनी बिशेषा। कमंडल को कह कहिये लेखा॥
इतने राम रावन होय गएऊ। सुनि रघुवीर अचंभौ भएऊ॥

साखी—जान्यो जन्महि अल्प जब, चले स्वर्ग अस्थान॥
निराकार निरंजन, तासु मर्म नहिं जान॥

चौपाई।

त्याग्यो राजपाट बंधु चारी। गये स्वर्ग नृप सैन सिधारी॥
आप इच्छा जन्म पुन लीन्हा। कृष्ण चरित्र आगे पुन कीन्हा॥

जाहि राम को जपत संसारा। ताको तो ऐसो व्यवहारा॥
बाजी दिखाय जीव सब राखा। मारै अंत करै अस लाखा॥
काह करै जिव पर बस परेऊ। तातैं सत्त शब्द चित धरेऊ॥
जमराजा है अति बरबंडा। मारै ब्रम्हा, विष्णु नौ खंडा॥
काल फांस कैसे मुक्तावै। जब लग सत्तनाम नहिं पावै॥

साखी—नाम अदल जो पावै, कहै कबीर बिचार॥
होय अटल जो निश्चय, जम राजा रहे हार बार॥

चौपाई।

सुन धर्मन मैं तोहि सुनाऊं। कृष्ण चरित्र को भाव बताऊं॥

कृष्णचरित्र।

राम रूप त्रेता अवतारा। गयो बियोग सकल संसारा॥
करै भेख बहुत विधि कैसा। लेखा मूल ब्याज है जैसा॥
एक नार रघुपति दुख पाया। सोरा सहस्र गोपि निरमाया॥
प्रथमहि गोपिन को निर्माया। पीछे कृष्ण देव ह्वै आया॥
देवकी कहँ जन्म लियौ जाई। दीन्ह सबै गोकुल पहुंचाई॥
नंद के गेह आन तिन राखा। है मम पुत्र जसोदा भाखा॥
करें नंद जसोधा महरी। पल भर कृष्ण राखना बहरी॥
गोपी सबै बिलास बनावैं। रात दिवस हरि के गुण गावैं॥
नृप दशरथ वसुदेव अवतारा। कौशिल्या सुमित्रा देवकी वारा॥
नारद ऋषि कंसहि कह भेऊ। यह निज जन्म न जानै केऊ॥
उपजो तुव बैरी भगवाना। नंद गेह गोकुल स्थाना॥
सुन नृप कीन्ह जो बहुत उपाई। मारहु ताहि कहै अस राई॥
कागासुर इक दैत्य अपारा। बल पौरुष जिहिं के अधिकारा॥
ताको कंस बचन अस भाखी। राम कृष्ण कर फोरहु आंखी॥
चल्यो दैत्य आयो हरि पाहीं। सखा संग जहँ बाल कन्हाहीं॥
जान्यो कृष्ण दुष्ट यह आही। चपट कैं मार्यो है हरि ताही॥

साकी—मारौ दैत्य महा बली, दैत्य राज भयमान ॥
भगनी तासु जो पूतना, ता कहँ दीन्हों पान ॥

चौपाई।

चली पूतना कर छल भेषा। गरल लगाइ पयोधर रेखा ॥
लेकै पयोधर कृष्ण लगाई। तारी तबै सबै बिष खाई ॥
एक बार ग्वालन संग गएऊ। जान बकासुर छैकै लएऊ ॥
मार्‌यो कृष्ण ताहि पल माही। नहीं दैत्य जीते कोई जाहीं ॥
इन्द्र पूजा नहिं दीन्ह गुवारा। वर्षे इन्द्र अखंडित धारा ॥
डार्‌यो इन्द्र बर्षा दिन साता। हरि गिर लीन्हो ऊपर हाँथा ॥

साखी—सात दिवस जब वर्षेऊ, जान्यो इन्द्र भुवार ॥
क्षमा अपराध अब कीजिये, देव विनय अनुसार ॥

चौपाई।

एक बार कालिन्दी तीरा। बछड़े लै गए जादौं बीरा ॥
लागी प्यास पिआवहिं पानी। पीवत ही भइ सब की हानी ॥
देखत कृष्ण अचंभौ भएऊ। उरग गरल सांवल तन भएऊ ॥
पुन धँस गये तहां यदुराई। नाथ्यो नाग वारि मँह जाई ॥

साखी—यह चरित्र माधवकियो, जानत नाहिन कोय ॥
बूझेंगे कोई बिरले; सतगुरु मिलिया सोय ॥

चौपाई।

केसी नाम बंधु वड़ बीरा। तिन पुन कीन्हा असुर शरीरा ॥
तब निकंद कीन्हे जो ठाना। छल के मार्‌यो तेहि भगवाना॥
सुकल केश कहँ बेग पठावहु। राम कृष्ण को बेग लै आवहु ॥
चल अक्रूर आये हरि पाहीं। कृष्ण चरित्र बूझे पल माहीं ॥
सोरा सहस्र अबला सों नेहा। बूझ न परै जीव दोइ देहा ॥

साखी—बहु क्रीडा हरि कीन्हीं, जानत नाहि न कोय ॥
आजिया पुत्रहिपालिये, आप स्वारथी होय ॥

चोपाई।

मारत तासु बार नहिं लावा। ऐसा देखो हरी स्वभावा ॥
रावन कुंभकरन जो मारा। ताको जन्म शिशुपाल अवतारा॥
चलतकृष्ण गोपिन किएशोगा। संग भले तब जादों लोगा ॥
मारन कौं हरि मता जो ठाना। मथुरा से हरि कीन्ह पयाना॥
मुष्ट चार औ दोइ खँड़ावा। सब असुरनहिं कंस गुहरावा॥
रंग भूमि नृप कंस बनावा। काल रंग भूमीही आवा॥
चल भए कृष्ण जहांकहँ तबही। कुबरी को सन्मान कियो जबही॥
पूर्व जन्म तिन सेवा कीन्हा। भक्ति हेतु ताको रति दिन्हा ॥

साखी—कुबरी को सन्मान कर, चल भयो राज द्वार॥
हस्ती कौ बलमहाबल, तिन को पहिले मार ॥

चौपाई।

मारत तासु बीर जो धाये। मुष्ट चार अरु दोई खड़ाये॥
सुये नृप पुन तब खस परेऊ। कालिन्दि तट आन जराएऊ॥
उग्रसेन कीन्हों सन्माना। गये हरि मात पिता अस्थाना॥
पूर्व जन्म सेवा तिन कीन्हा। भक्ति हेतु मैं दर्शन दीन्हा॥
जरासन्ध नृप लाग गुहारी। सत्रह बार तिन कीन्ही मारी॥
तैंतिस क्षोहणि दल तिन जीता। जमन केर सम्हर पर बीता॥
नृपमुचकुंदहि तब पुनि मारा। ताकौ हरि पुनि बैर बिचारा॥

साखी—यह चरित्र कहु कैसौ, जमन को आनि मराव॥
जीव कौ बदला जीव है, अदल अंश कर न्याव॥

चौपाई।

कंस मार हरि गोकुल गएऊ। गोपिन समाधान हरि किएऊ॥
सब मिल कीन्हौ मंगलचारा। तब हरि ऐसौ वचन उचारा॥
दुरबासा ऋषि तप बड़ कीन्हा। इच्छा भोजन माँगहि लीन्हा॥

जाय सबै ले जमुनहि पारा । लै चलि भोजन भर २ थारा ॥
जमुना बहु विधि आव गुसांई । तब हरि ऐसा वचन सुनाई ॥
कहौ जाइ कालिन्दी तीरा । कृष्ण छुवा नहिं मोर शरीरा ॥
होइ है थाह जाइ हो पारा । चल भौ गोपी लाग न बारा ॥

साखी—कृष्ण सन्देशा कहिके, सबै भई तब पार ॥
जाइ कराइन भोजन, तब विन्ती अनुसार ॥

चौपाई ।

तव गोपिन अस वचन सुनावा । हे प्रभु पार जाहिं किहिं भावा ॥
कालिन्दी से कहि सब मादा । ऋपि नहिं खाइब मोर प्रसादा ॥
कहत सन्देशा सब भई पारा । अचरज भयी मन माहिं बिचारा
ठगई लगा तीनों पुर माहीं । कृष्ण कहाये अचरज नाहीं ॥
चौथे लोक बसै परधाना । ताहि खबर कहु विरलन जाना॥
तपके तेज कहा बड़ भएऊ । तीन लोक जो अचरज ठएऊ ॥
एकबार शिशुपाल भुवारा । कृष्ण से कीन्ह जो समर अपारा
मार्‍यो तबै दैत्य बल बीरा । निकसे प्राण जो छाड़ शरीरा ॥
सब के देखत कृष्ण जो खावा । तेहु न बूझै काल स्वभावा ॥
सब के देखत ग्रास जो कीन्हा । तासों कहे मुक्ति हरि दीन्हा ॥

साखी—काल सवन कौ ग्रास्यो, बचन कह्यो समुझाय ॥
कहैं कबीर मैं का करों, देखैं नहिं पतिआय ॥

चौपाई ।

बूझो संतो काल की हानी । हरि को भाव भले मैं जानी ॥
कृष्ण के भयो जो प्रदुमन बारा । ताकुल अनिरुध लीन्ह अवतारा
सुन प्रवान बानासुर राऊ । शिव सेवही महाबल पाऊ ॥
ता नृप कै दुहिता यक भयऊ । ऊखा नाम तासु कौ ठयऊ ॥
रूप आगर किमि करों बखाना । ताहि देख कर काम लजाना ॥
उन्मद यौवन भयो पुन जबही । काम बान सर लागेउ तबही ॥

साखी–तासु दूत गए द्वारिका, अनुरुध अंश भुवार ॥
दोऊ उपजो मर्म अब, जस हंसनकी ज्वार ॥

चौपाई ।

दिवस आठ दस बीते जबही । अनुरुध कुँवर प्रगट भयो तबही
बानासुर ने क्रोध दल साजा । अगणित बाज सम्हर कौ बाजा ॥
युद्ध करें दैत्य तहँ जाइ । अनिरुध सब कहँ मार हटाई ॥
छै प्रकार जीतो उन जबही । सातईं बार भर्म भयो तबही ॥
दैत्य मार गहि समर अपारा । बांध चपल कै कृष्ण कुँवारा ॥
कोई कहै मारो विषको मूला । शत्रु राख कै नृप कस भूला ॥
मंत्री कहई सुनो भुवारा । शिव की आज्ञा मैं यह मारा ॥
नारद ऋषि तबही सुधि पाई । कृष्णहि बात जनावेहु जाई ॥
चलभयो कृष्ण जो क्रोध अपारा। दैत्य जहां तहँवा पगु धारा ॥

साखी–गरुड चढ़े तब कृष्ण सो, पुरही पँहुचे आय ॥
जाही नग्र अग्नि दियो, दैत्य राज तिहि ठांय ॥

चौपाई ।

आय दैत्य करैं संग्रामा । हरि भेंटे तेहि यम उन ग्रामा ॥
मारो हलधर अगिनित वीरा । बानासुर देख परे तेहि भीरा ॥
मोरा कृष्ण मता सुन आजू । अटल दियो मोहि शंकर राजू ॥
बहु विधि युद्ध दैत्य तब कीन्हा। कृष्ण चपल तेहि बांधहि लीन्हा
बांध्यो नृप शंकर सुधि पाई । क्रोधित आइ तब कृष्ण लराई ॥
दोनों वीर महा बल धारी । लागी होन परस्पर मारी ॥
दोनों मंत्र पुनि दीन अड़ाई । तारी मार मार पुन धाई ॥
दोइ जुरे पुन मल्ल समाना । कौतुक आइ निरंजन जाना ॥
दोउके समर पावक उठि जबही। आदि भवानी चल भइ तबही ॥
दोनों सुत कहँ जब बिलगावा । बादल पवनक जैस स्वभावा ॥

साखी–दोई सुत तब बरजी, आदि भवानी आय ॥
वर ऊपा अनुरुद्ध को, शङ्कर दीन्ह मिलाय ॥

चौपाई ।

चले कृष्ण और सुत भामिनि ।तासु अंग चमकै जिमि दामिनि॥
कृष्ण द्वारिका पहुँचे जाई। सो वृतान्त कहौं समुझाई ॥
जोपै हर हरि कौ व्रत धरई। प्रभु सेवक कहु काहे लरई ॥
प्रभु सेवक कहु कैस लड़ाई। सो गति मोहि कहौ समुझाई ॥
हरि हर युद्ध सबै कोइ जाना। सहस्र नाम किमि करव बखाना
यमराजा जु ठगौरी लायी। ज्ञान देख कर चेतो भायी ॥
बूझौ सब मिलि पाखंड धरमा। मैं जानौं भल कालहि मरमा ॥
अदेख देख सब कहि समुझाई। ताकौ विरला जन पतिआई ॥

साखी–शंकर कियो जुद्ध हरिसों, तब कहु कैसो दास ॥
पंडित जन सव थापहीं, सहस नाम विश्वास ॥

चौपाई ।

चारौं वेद को मूल बताऊँ। सहस्र नाम को सार बुझाऊँ ॥
काशी में विश्वास जनावई। विश्वनाथ के मंदिर धावई ॥
विश्वनाथ को भेद बतावहु। सार ग्रंथ मोही समझावहु ॥
सबै ग्रंथ करि आगिल कीन्हा। भक्ति तत्व सबै मिलि चीन्हा ॥
सब पर सहस्र नाम परवाना। जहँ लग शास्त्र रु वेद पुराना ॥
तेहि जानै जेते सब कोई। बूझै मरम जु बिरला कोई ॥
बूझौ पंडित भेद बताई। प्रभु सेवक कहु कैस लराई ॥
यह सब बंध बहुत मैं भाखी। ते जम राजा सब ठग राखी ॥
ज्यों नारी पिय को व्रत तजई। दूजे जु प्रेम प्रीति सौं भजई ॥
तैसो देखो यह संसारा। नाम बिना किमि उतरै पारा ॥

साखी–भूल परी सब दुनियाँ, पाखंड के व्यवहार ॥
मूल छाड़ि डारै गहै, कैसे उतरै पार ॥

चौपाई ।

तब हरि कीन्हें चरित अपारा । सो अब भाखौं अगिल व्यवहारा ॥
पांडव पांच सेवा बहु करई । तिन सौं कृष्ण हेतु बहु धरई ॥
मारन तासु को मतौ बिचारा । पांडव कौरव नृप दोइ भारा ॥
दोनों में छल कियो भगवाना । ताको मर्म काहु नहिं जाना ॥
बंधु बिरोध बैर उपजाई । प्रतिदिन समर करें तहँ आई ॥
राजा द्रुपद स्वयम्बर ठाना । तहँ पारथ राहू संधाना ॥
दुर्योधन अस कीन्हं उपाई । कन्या मारि लेव पांचो भाई ॥
कृष्ण ताहि छल मत उपजावा। तातें ताहि पांच पति भावा ॥
तेहि मारन हरि मतौ बिचारा । गीता कह अध्याय अठारा ॥
कौरव आइ जो करहिं लडाई । ताहि कृष्ण छल से मरवाई ॥
मारचो करण गंगसुत द्रौना । सब को मारि कियो दल सूना ॥
मारचो दुर्योधन जो राई । अठारह क्षोहणी मार गिराई ॥

साखी–पांचों पांडव बचि रहे, औ जूझे सब झार ॥
धरमराय अस कीन्हा, कृष्णहि परी हंकार ॥

चौपाई ।

चलभ ये कृष्ण स्वर्ग अस्थाना । शून्य आदि जहँ शशि नहिं भाना
पुर वैकुंठ ते आगे गयेऊ । तहां जाइ के स्तुति कियेऊ ॥
अलख निरंजन अंतर्यामी । सब तें न्यारे हौ तुम स्वमी ॥
सब में व्याप्त निरंजन राया । पांचों तत्त्व शून्य उपजाया ॥
तुमही ब्रह्मा बिश्नु महेशा । आदि अंत तुम देव गणेशा ॥
अहो कृपालु कृपानिधि स्वामी । करहु दया तुम अन्तरयामी ॥
ततक्षण भई अकाश तें वाणी । अहो कृष्ण सब को उतपानी ॥
अब जो कहौं करो सो जानी । सोई वचन लेव सिर मानी ॥
तुम भेजा महि भार उतारहु । असुरनको विध्वंस के मारहु ॥

साखी-मारहु जादव बंश कहँ, मानो वचन रसाल ॥
गोपी जाय संहारो, तेहि पाछे तुव काल ॥

कृष्णवचन-चौपाई।

कृष्ण कहै सुन पुरुष पुराना। काल अभै कहां मोर ठिकाना॥

निरंजन वचन।

तैं मम अंश मोहिमें वासा। काल रूप संसार निवासा॥
पातक जीव जो रहै महाबल। मारहुतिनिही तुमअतिबल छल
उपजत विनसत क्षीन भइ देहा। कलियुग आवै क्षीण सनेहा॥
क्षीण शरीर अवधि भइ थोरा। पूजी अवधि आइ कै तोरा॥
जस कछु कहौ कीया सो चहिहौ। जाकौ दियाराज महिकरिहौ॥
छाडो महि मंडल को भाऊ। जगन्नाथ में कष्ट बनाऊ॥
तजौ कृष्ण अव वेग शरीरू। आये अव अब दास कबीरू॥

कृष्ण वचन।

साखी-सुन कियो कृष्ण अचंभो, कैसो दास कवीर॥
सो मोहि स्वामी कहव सब, तब मैं तजों शरीर॥

निरंजन वचन-चौपाई।

कली अनेक राज्य है मोरा। कलियुग नरहि अवधि है थोरा
पांडव नंदन यज्ञ जो ठानही। ऋषिगण सबही निवत जु आवही
यज्ञ पूर्ण नहिं ताकर होई। नाम प्रभाव कहै नहिं कोई॥
कलि उत्पन्न: मनुष्य शरीरू। जा कहँ सुनियो दासकबीरू॥
तिनके शिष्य सुपच जो होई। पूरण यज्ञकर ततक्षण सोई॥
या सहिदानी तोहि बताऊँ। तोहि सेती महि मंडल छाऊँ॥
बालिहि राम रूप तुम मारा। ताकर होइ व्याध औतारा॥
ताकर बैर देहुँ तुम जाई। फेर जीव कछु संशय नाई॥
सुनिकै कृष्ण चले सिरनाई। नगर द्वारिका पहुँचे आई॥

पांडव निवते यज्ञ पठाये । चालिये स्वामी बेग बुलाये ॥
मारन बंधु या क्रिया लागा । तातें यज्ञ रची है रागा ॥
चल भये कृष्ण वार नहिं लाये । पुर पांडव के आश्रम आये ॥
आवत समाधान नृप कीन्हा । क्षत्र तानि सिंहासन दीना ॥
आवत कृष्णसभा सिर नावा । भोजन को तब आज्ञा पावा ॥

साखी—बैठे गन्धरव देव गण, ऋषि मुनिवर सब झार ॥
सब मिलि कीन्हा भोजन, इच्छा के अनुसार ॥

चौपाई ।

भोजन भये घंट नहि बाजा । राय युधिष्ठिर को भयी लाजा ॥
अहो कृष्ण का करौं उपाई । सो मोहि स्वामि कहिये समुझाई
जबहि कृष्ण अस भाव बताया । सुनहू मंत्र युधिष्ठिर राया ॥
खोजहु भक्त जो निर्गुण गावयी । सतगुरु महिमा सदा बतावयी ॥
आनब ताहि यज्ञ निवताई । दीन भाव कर ताहि लिवाई ॥
कृष्ण बचन सुनि युधिष्ठिर राया । भगत बुलावन दूतपठाया ॥
सुनिके दूत चले चहुँ देशा । नहिं कोइ भक्तन भेंटे वेशा ॥
चले भीम तब लागि न वारा । चहुं दिश फिर काशी पगुधारा ॥
बैठे सुपच ताहि सों कहई । निर्गुण भक्त यहां कोइ रहई ॥
कहै सुपच निर्गुण को जानों । सतगुरु महिमा सदा बखानों ॥

साखी—कहै भीम सुन हरिजन, कृपा करौ मम संग ॥
चलो जहां हरि बैठे, स्वामी बाल गुविन्द ॥

चौपाई ।

कहैं सुपच प्रभु कैसी कहऊ । कालहि जान कृष्ण परि हरऊ ॥
सुनतहि भीम कोप तब कीन्हा । यामैं कहा भक्त कर चीन्हा ॥
यहि मारो तो राव रिसाई । कह्यो मंत्र राजा पर जाई ॥
तीन लोक के जे प्रभु राई । तिनको मारवै काल कसाई ॥

कृष्णहि कहैं काल की फांसी। कीन्ही आय भक्त की हांसी ॥
मारचो नहिं पर तुव भय माना। यह सुनकर बिहिसे भगवाना ॥
साखी—जाव युधिष्ठिर वेग दै, तुम आनो गहि पांय ॥
आज्ञा मानि चले तब, आये युधिष्ठिर राय ॥

चौपाई।

अहो संत तजिये अपराधा। अधम उधारन सुनियत साधा ॥
चलो स्वामी मेरे ग्रह आजू। कृपा करौ मम होवै काजू ॥
कहैं सुपच सुन पांडव राऊ। तोर का काज होय वहि ठाऊ ॥
तुम्हरे गये होय मम काजा। परमारथ तुम को बड़ साजा ॥
चल परमारथ कारण संता। सभा माहि बैठे हरषंता ॥
आवत सुपच कृष्ण जबजाना। होय काज पूरण सनमाना ॥
राय युधिष्ठिर पखारे पांऊ। भोजन सादर आन जिवाऊ ॥
भोजन करके सुपचभयो ठाढा। बाज्यो घंट शब्द भयो गाढ़ा ॥
याज्यो घंट यज्ञ भयो पूरा। कौतुकदेखि ऋषीगण भूला ॥
पूरण यज्ञ विष्णु जब जाना। तबही कीन्ह द्वारिका पयाना ॥
साखी—बूझोरे नर परानी, क्या सुपचै अधिकार ॥
गण गन्धर्व मुनि देव ऋषि, सब मिलि कीन्ह अहार ॥

चौपाई।

सब के खाये घंट नहिं बाजा। धर्म की देह युधिष्ठिर राजा ॥
सो सब रहे पूर्ण यज्ञ नाहीं। नामहि महिमा जानत नाहीं ॥
सुपच जान भल नाम प्रभाऊ। तातें पूरण यज्ञ कराऊ ॥
कृष्ण शक्ति में मुनि ऋषि झूला। जान बूझि के पंडित भूला ॥
बूझौ संतो नाम हमारा। नाम बिना किमि उतरौ पारा ॥
कृष्ण पारथहि वेग बुलावा। तेहि पुनि निज मतौ सुनावा ॥
गोपी लैकै जाउँ मैं जहँवा। पुर वैकंठ सुमेर है तहँवा ॥

मथुरा तै तुम वेग लै आवहु। जाहु तुरन्त गहर जनि लावहु॥
चल भयो पार्थ हाथ धनु तीरा। गोपी लैन कोटिन यदुबीरा॥
आपस में जो करे लडाई। इक मारे एक मरिजाई॥
छप्पन कोटि जो सबै सिरानो। सो नट पट कृष्णहि के जानो॥
अष्ट कन्या लिखी चित्र सारी। तिन कहँ कृष्ण जो यहि विधिमारी

साखी—मारिन सब जेती हती, कृष्ण काल बरि यान॥
तब अपने मन में गुनौ, करो उदाधि अस्थान॥

चौपाई।

बधिक देव घात संधाना। बालि वैरको भाव जो जाना॥
जम सब प्रान घेर लै गयेऊ। मारयो कृष्ण मूर्छित भयेऊ॥
निरंकार निरंजन राऊ। आपहि मारि जो ताहि नसाऊ॥
बालि का वैर ब्याध जब लीन्हा। यह तो भेद न काहू चीन्हा॥
तीन लोक के कृष्ण भुवारा। रहै ना बैर जीव व्यवहार॥
जो जीव आप स्वारथहि मारा। सोजीव अपनौ किमि निस्तारा
तबही कृष्ण अस मता बिचारा। तत्व मता अस रूप संहारा॥
जादव रूप कृष्ण सब मारे। पारथ बान रहे सब हारे॥
गोपी रही जो प्राण प्यारी। तिन को कृष्ण येहि बिधि मारी॥
आये कृष्ण पहँ अर्जुन बीरा। लाज न छांडै अत्र शरीरा॥

साखी—कहैं कृष्ण सुन अर्जुन, छाडो यहि संसार॥
हम तो जात हैं स्वर्ग को, इत परपंच अपार॥

चौपाई।

गये पारथ जहाँ चारौं भाई। चलौ वहीं जहँ यादो राई॥
कहैं सन्देश सुनौ हो राऊ। यहवाँ मोर दरश नहिं पाऊ॥
मृतु मंडल नहिं मेटव मोही। छाड़ौ महि बोलों अस तोही॥
छाड़ौ राज पाट सब भाई। पुत्र राज देऊ सब जाई॥

चारेउ पांडव काल वस भयेऊ । राय युधिष्ठिर सदेह तब गयेऊ ॥
ता कहँ बड़ सासत जो कीन्हा । नाम विना देखो अस चीन्हा ॥
देखत कृष्ण अपन तन त्यागा । चिता तासु की रचन जो लागा॥
चंदन काष्ठ तासु तन जारा । चल भयो काष्ठ समुद्र मझारा ॥
इंद्र दवन हरि सपना दयेऊ । तिन पुनि काष्ठ आन धरि लयेऊ
मूद्यायोद्धार काहु नहिं जाना । ठक २ उठै दिन रात प्रवाना ॥
शिशुपाल भुजा चाररहोजाही । मारचो कृष्ण जो भक्ष्यो ताही ॥

साखी—सबै अंग सम्पूर्ण हैं, जगन्नाथ को भाव ॥
शिशुपाल की भुजा उखारी, ताको बैर दिवाव ॥

चौपाई ।

दोई भुजा जेहि काष्ट उरेहा । बैर न छूटे सो गहि देहा ॥
जो कोई जीव जोर कर मारा । तासु जन्म किमि हो निस्तारा ॥
राम कृष्ण तै को वड आही । बैर घात तासों न रहाही ॥
कृषी करै किसान जस भाऊ । ऐसी दसों जनम निर्माऊ ॥
दसों जनम ऐसे ही बीते । तासों कहै कि मुक्ति करीते ॥
बूझों नहिं चरित्र भगवाना । तीन जुग गये काल नियराना ॥
है वड़ ठाकुर ज्योति स्वरूपा । तिन सब रच्यो मही औ भूपा ॥
आप स्वार्थी तिनहूं मारे । ज्यौं नकटी विश्वासहि बारे ॥

साखी—जस सिरदार मही को, करै चरित्र भुवार ॥
जहँ तहँ सील पटावै, मल्ल बली तब धार ॥

चौपाई ।

कलियुग अन्त मलेच्छ व्यवहारा।तब हरि निष्कलंक अवतारा ॥
मारहिं मलेच्छ सबै पुर कैसे । पावक मध्य तृण है जैसे ॥
पावक रूपनिकलंक अवतारा । तृन समान मलेच्छ संहारा ॥
बहुर कलंकी ज्योति समाई । कौतुक करै निरंजन राई ॥
ऐसे दसों जन्म निर्माये । निरंकार पुनि ताहि सताये ॥

धर्मदास वचन।

धर्मदास कहैं सुनों गुसाईं। दसों जन्म कहि मोहि सुनाई॥
कलप अनेक निरंजन राजा। आगे कैसा करिहैं साजा॥
सो सब स्वामी मोहि जनाओ। उत्पति प्रलय भाव बताओ॥
उत्पाति प्रलय सुनौं तुम पाही। कहौ सबै जो संशय जाही॥

साहिब कबीर वचन।

चारौं युग हैं रहट स्वभाऊ। सो अब तोहि कहौं समुझाऊ॥
चारौं युग अंत जब होई। वर्षै अग्नि निरंजन सोई॥
पृथ्वी जार करै सब पानी। रहै स्वर्ग सो कहौ निशानी॥
रहै जो देव तेंतीस करोरी। रहै जब तपसी तप की जोरी॥
चंद सूर्य तारा गण झारी। जबई देह तजै मुख चारी॥
विष्णु बीतही दस अवतारा। नहिं शिव वीत जोग जो धारा॥
यहि बिधि बहत्तर चौकड़ी जाई। सेवा फल पावै अन्याई॥
उत्पत्ति करै पुन प्रथम स्वभाऊ। ऐसे भवसागर निर्माऊ॥
७८—महा प्रलय जब किया निरंजन अग्नि सेवत ना रहौ॥
लोमश ऋषि तब होय अंतहि शशि भानु पानी सब गयो॥
तीन गुन पांच तत्व बीते दस चार सुत आकाश हो॥
महा देवी आदि कन्या ताही करै वह गरास हो॥
सोरठा—सब भक्षै निरंजन राय, आदि अंत ना कछु रहै॥
शिव कन्यानामबिहाय, सब जीव राखे आप में॥

चौपाई।

सतगुरु दया जाहि पर होई। नाम प्रताप बाचै जन सोई॥
निज घर हंसा करहि पयाना। और सकल जीव तहां समाना॥
जाइ रहैं जहां धर्महि द्वीपा। प्रथम करी जो लोक समीपा॥
उत्पति कारण सेवा करही। पुनि यहि भांति सृष्टिअनुसरही॥

भक्त अभक्त सबै पुनि खाई। सब को भक्षे निरंजन राई॥
सो पुनि महिमा वेद बखाने। वेद पढ़े पर भेद ना जाने॥
छंद–जेहि को भरोसा सोई चुरावे कहो तब कैसी बनै॥
सेवा करें जेही पुरुष की सो भक्षन प्रति दिन करै॥
जानि कै बूझे नाहि केतो कहो समझाय हो॥
आदि अंत सबै ग्रसै अस निरंजन राय हो॥
सोरठा–काल सबन को खाय, हरि हर ब्रम्हा से सबै॥
वाचै कौन उपाय, एक नाप जाने बिना॥

धर्मदास वचन–चौपाई।

धर्मदास टेके गहि पाऊ। हे स्वामी मोहि भेद बताऊ॥
कैसै आयो यहि संसारा। सो कहिये मोसों व्यहारा॥

साहिब कवीर वचन।

सत्य युगमें कबीर साहबका पृथ्वी पर प्रकट होना।

सुन धर्मनि मैं तोहि बताऊं। लोक छोडि मैं इहवां आऊं॥
सतयुग सत सुकृत मम नाऊँ। सोई सबै तोहि समझाऊँ॥
हंस उबारन आयेउ जबही। मथुरा नगरहि पहुँचे तबही॥
गुमठ मांझ जो आसन कीन्हा। रह्यो अंत मोहि काहु न चीन्हा॥
कहौं भक्ति बहु भांति दृढाई। बिन अंकूर न जीव जगाई॥
बिबसी नाम रहै इक रानी। ज्ञानवंत औ वरण कुवांरी॥
तासौं कह्यो भक्ति परमाना। बिबसी सुनै अचंभौ माना॥

बिबसी वचन।

साखी–अचरज कही तुम स्वामी, लोक वर्ण उजियार॥
पहिले लोक दिखाओ, पीछे हो इतबार[1]॥

---

१ विश्वास।

चौपाई।

तब हम मता अस कीन्हा। ताके शीस हाथ जो दीन्हा॥
परसत शीस ताकर भय भागा। शून्य मंदिर में सुहरा जागा॥
देखत सुरति निरति सौं लोका। विवसीका मेंटचो सब धोखा॥
हे स्वामी अब कीजे दाया। यम के घर से जीव मुक्ताया॥
बार अनेक बिनय तिन कीन्हा। तबहम नाम लखाई दीन्हा॥
भक्ति भावसों करै अनंदा। ज्यों चकोर पाये निशि चन्दा॥
ताके ग्रह निंदक सब रहई। बिबसी देखत ही पर हरई॥

साखी—जाके पाछे हंस जो उबरे, तिनहि को जो बताव॥
हंस ग्यारह आएऊ, गुरु से कीन्ह भिंटाव॥

चौपाई।

तिन कहँ सत्त शब्द जो दीन्हा। परम पुरुष के दर्शन कीन्हा॥
तब उठि गयो पुरुष के ठाऊँ। सतयुग सत सुकृत मम नाऊँ॥
आवत जात लखे नाहिं कोई। आज्ञा पुरुष की जापर होई॥

त्रेतायुग में कबीर साहबका प्राकट्य।

त्रेतायुग आयो पुनि जबही। युग अनुमान चलो मैं तबही॥
नाम मुनींद्र धरो निःशंका। प्रथम जाय देखेउ गढलंका॥
द्वारपाल सों कहि समुझाई। राजा को लेआव बुलाई॥
सुन प्रतिहार कहें अस बानी। रावन मरम सिद्ध नहिं जानी॥
महा गर्व कछु गिनै न आनो। शिव के बल कछु शंक न मानो॥
मारहि मोहि कहौं जो जाई। गर्व प्रहारी है रावन राई॥

मुनींद्र वचन।

जाहु तुरत कहा सुन मोरा। बार बंक नहिं होवहिं तोरा॥
प्रतीहार जब बात सुनाई। सिद्ध एक है ठाढ़ गुसाई॥
सुनि नृप क्रोध अनल सम कीन्हा। प्रतीहार तुम मतिअति हीना॥
भिक्षुक एक जो मोहि बुलावै। शिव सुत मोर दरश नहिं पावै॥

साखी–कहा रूप तेहि ऋषी कर, मोहि कहो समझाय ॥
जो मागे सो देव वाहि, लेइ बहुर घर जाय ॥

चौपाई ।

हे प्रभु आहि सेत जो भाऊ । सेत अंग जैसे शशि राऊ ॥
माला तिलक बदन है सेता । कहै नृपति कोई आहि अजेता ॥
मन्दोदरि कहै सुनो हो राजा । ऐसा रूप और नहिं छाजा ॥
सेतु रूप महिमा मैं जानौं । निश्चय है कोई पुरुष पुरानौं ॥
जाई तुरन्त गहौ तुम पाऊ । होउ अकल सुन रावन राऊ ॥
दस सिर बचन सुनत परजरेऊ । जरत हुताशन जनु घृत परेऊ ॥
चलि भयो असुर अनिल सम चीन्हा।हतहु बेग मनमेंअस कीन्हा
सत्तरवार खड्ग सो चलावा । तब हम ओट तृणकी लावा ॥

साखी–तृण ओट जेहि कारणें, गर्ब परिहरो राव ॥
तृण जबही ना टूट्यो, राजहि शोकजनाव ॥

चौपाई ।

कह मन्दोदरि गहि मम पाऊ । गर्ब ना छाड़ै रावन राऊ ॥
शिव की सेव करै मन मानी । अटल राज दीन्हौं तिन ठानी॥
तब चलत हम कही असबाणी । मूढ़ नृपति तुम मर्म न जानी॥
सुनु रावन जो लंक मझारा । सब कहँ रामचंद्र जो मारा ॥
काहू मुक्ति गम्य नहिं पाई । तातें मैं कछु कहों बुझाई ॥
तो कहँ भक्षहि काल अन्याई । काचा मास स्वान जिमि खाई॥
काल भक्ष जिव सबहि निदाना। अधिक तोर कछु मर्दै माना ॥
अगिला जन्मतोर होइ जबही । भक्षीकृष्ण देख पुन तबही ॥
उनसै करिहो बहु अभिमाना । ताकर तोहि कहों परवाना ॥
तृण नाहिं टूटो बल तुम बूझा । आगै कहा तोह बल सूझा ॥
बालि नाम इक कपि जो होई । रख छह मास तोहि कहँ गोई ॥
तिनकी कांख रहिहो छै मासा । ऐसा कह पग कीन्ह प्रकाशा ॥

साखी—रावन को अपमान करि, अवध नगर चलि आय।
दशा सन्त की जान कै, मधुकर पकरै पाव ॥

प्रसंग—चौपाई ।

नमस्कार कर गहि लिये पांऊँ। बाल गोपाल चरण तर नाऊँ॥
ताकी प्रीति नीक मैं जाना । तासौं लोक संदेश बखाना ॥
तिन कीन्ही विन्ती बहुवानी । हे प्रभु देखों लोक सहिदानी ॥
लैकर चले पंथ तेहि जहँवा । पांजी एक रहे धर्म तहँवा ॥
देखि ताहि दौरे यम दूता । कहां ले चले विप्र को पूता ॥
कहें मुनींद्र सुनो यमराई । इनको जिन रोकौ तुम आई ॥
जाकर दूत जाव तेहि पासा । पाछे करो बैर की आशा ॥
ब्रह्मा विष्णु शिव आज्ञा देही । तीन लोक महँ जिव गहि लेही॥

साखी—छोड़ देव यह मारग, तुम अब आहू कौन ॥
यहां कोई नहिं आवे, तुम कहँ करत हो गौन ॥

चौपाई ।

तब मुनींद्र अस बोले लीन्हा । होहु दूत तुम सब बल हीना ॥
शब्द प्रमाण न होइ बल थोड़ा । दूतन जीत गये महि ओरा ॥
तिन को दिव्य दृष्टि कर दीन्हा । तहँवा जाय लोक तिन चीन्हा॥
देखि स्वरूप सुरंग अपारा । झलके जोत तहां उजियारा ॥
देखत मधुकर बहुत प्रतीती । हे स्वामी तुम यम कहँ जीती ॥
मो कहँ दीजे शब्द दृढ़ाई । जेहिते हम परम पद पाई ॥
अति आधीन देखा मैं जबही । नाम दृढ़ाय दियो तेहि तबही ॥
अति आधीन जो बोल स्वभाऊ। मोरे ग्रह अब धारो पाऊ ॥
ताके ग्रह आयो मैं जबही । सोरा जीव शरण भये तबही ॥

साखी—मधुकुर जेते जीव सब, लोकहि कीन्ह पयान ॥
तातैं नाम मुनींद्र कहि, जीव सत्त दियो दान ॥

चौपाई।

तब हम गये आप सुख सागर। अभै पक्ष जहँ नाम उजागर॥
बिन्ती दंडवत कीन्ह अनेका। पुहुप द्वीप द्वीपन को थेगा॥
क्रीड़ा बिनौद होत बहु भावा। द्वापर युग धर्म न नियरावा॥

द्वापारयुगमें कबीर साहबका प्राकट्य।

आज्ञा पुरुष दीन्ह मोहि सारा। ताते बहुरि नाम उरधारा॥
करुणा मय मम नाम प्रकासा। बहु जीवन कहँ छुडायो फांसा॥
अयो जहँ चन्दबिजै बड़राऊ। गढ़ गिरनार नगर तेहि ठाऊ॥
ताकी नारि रहे व्रतधारी। पूजै साधु कुल लाज बिसारी॥
तिन पुनि सुधि सो हमारी पाई। लैगयी बहु विधि तुरत लिवाई॥
आई चेरी बिन्ती कीन्हा। तुव दर्शन रानी चित दीन्हा॥
मैं नहिं राजा रावकर जाऊं। उठ रानी आपहि चलि आऊं॥
नमस्कार कै कहि अस वानी। मोरे ग्रह पगु धारै ज्ञानी॥
ताकी प्रीति नीक मैं जाना। राजागृह तब कीन्ह पयाना॥
रानीकह उपदेश जो दीन्हा। राजा कर कछु शंक न कीन्हा॥

साखी—एक दिवस जो रानी, बूझा मता अपार॥
कहा मता तुम ज्ञानी, सो कछु कहो बिचार॥

रानी इन्द्रमतीका कबीर साबहसे ज्ञान चर्चा करना—चौपाई।

तासो कह्यो सुनौ हो रानी। अधरहि रहौं नाम मम ज्ञानी॥
जो कोई माने कहा हमारा। ताको पठऊं जम सों न्यारा॥
कहे रानी मोहि कीजे दाया। जातें नहिं हते यमराया॥
बहुत भांति तत्त्व जो चीन्हा। बहु बिधि बिन्ती मुक्ति अधीना॥

कृष्ण विष्णु व्यवहार।

सोवत कृष्ण स्वप्न इक देखा। बहु बैकुंठ सेत जनु रेखा॥
उग्यो बादल सेतहि फूला। सपना देख कृष्ण मन भूला॥

अहो ब्रह्मा मैं सपना देखा । बादल उमंग पहुप की रेखा ॥
सोवत देखा पुर में अपना । ब्रह्मा वेद देख कहु सपना ॥
रास वर्ग गनि मोहि बताओ । जेहि ते जीवका भर्म मिटाओ ॥
तब पुनि ब्रह्मा वेद बिचारा । पुनि भाष्यो ताकर उपचारा ॥
सुनौ विष्णु समझाऊं तोही । यही आज्ञा भयी सो मोही ॥
साखी—है कोई ज्ञानी जीव बड़ा, तेहि कारण प्रभु आव ॥
दूत ताहिं नहिं पावई, सत्त पुरुष सुन नाव ॥

चौपाई ।

सुनिकेविष्णुअचरजमनकीन्हा । ब्रम्हा सों तब बोले लीन्हा ॥
सोई करौ जो जीव न जाई । राखौ ताहि महि भरमाई ॥
सुनि के ब्रह्मा मतौ बिचारा । तक्षक रूप दूत पगु धारा ॥
यह सब भेद जबै हम जानी । इन्दुमती सो आज्ञा ठानी ॥
काल रूप तक्षक को आही । डस है तोहि जो कष्ट जनाई ॥
विरहुलि शब्द गहो मन लाई । यम को दूत जीति नहिं जाई ॥
रानी शब्द विरहुली पाई । ता कहँ तब प्रतीति मन लाई ॥
बहु विधि सुमरै शब्द अघाई । काल घरी निकटै ह्वै आई ॥
चारौं दूत पठाय यम राऊ । गढ़ गिरनार बेग चल आऊ ॥
साखी—रानी भक्ती लीन्ह मन, काल न पावै दाव ॥
साथ चले घर आपने, रानी मस्तक नाव ॥

चौपाई ।

राजा रानी दोई शिष्य मोरा । रानी लीन्ह राव मति भोरा ॥
तब यमदूत मता अस कीन्हा । चित्रसार में पहुंचे लीन्हा ॥
रानी चली सिज्या पर जबही । तक्षक ग्रास भर्म भयो तबही ॥
रानी कहे डस्यो मोहि सांपा । राजा कियो कठिन संतापा ॥
मंत्री गुणी सब तुरत बुलाये । राजा आज्ञा सों सब आये ॥

रानी शब्द बिरहुली भाखा। दूर २ सबहिन को राखा ॥
रानी क्रोध बहुत तब कीन्हा। बहुत होय नृप अति आधीना ॥
अरे भाई मम प्राण प्यारी। यही बार तुम लेव सम्हारी ॥
मूर्छित रानी सब चलि आये। जाग्रत जान के सबै सिधाये ॥
तक्षक विष नहिं लाग्यो नारी। अंतक दूत रहे सब हारी ॥
साखी—रानी उठि ठाढ़ी भई, राजहि हरष अपार ॥
सुमिरन हम को कियो, धन्य है गुरू हमार ॥

चौपाई।

तक्षक राव तब आये जहवां। ब्रह्मा विष्णु महेश्वर तहवां ॥
विष को तेज शब्द सों जीता। सुनि के विष्णुहिं भयी तब चिंता
धर्मराय को तुरत हंकारा। यम दूतन को जो सिरदारा ॥
ताको हरि अस मता सुनावा। करियो सबै तुम सेतहि भावा ॥
आने छलि कैं जो नृप नारी। निश्चय आज्ञा आहि हमारी ॥
सुनिके दूत भेष कियो रंगा। अपन कीन्ह सब सेतहि अंगा ॥
आये दूत नगर नियरावा। रानी ऐसा सपना पावा ॥
आये गुरु ज्ञानी जो हमारे। बोलत अमृत वचन सुधारे ॥

ज्ञानी वचन।

सुन रानी तोहि भेद बताऊं। काल चरित सब तोहि सुनाऊं ॥
छलबे अइहैं ताहि सम्हारो। सेत रूप जिन भाव विचारो ॥
साखी—मस्तक ऊंचा काल का, चित्त में गुण का रंग ॥
यहि चिह्न तुम चीन्हियो, और सेत सब अंग ॥

चौपाई।

भये प्रभात काल तब आवा। सेत रूप सब अंग बनावा ॥
अये जहां तहां नृप नारी। तिनसौं ऐसो बचन उचारी ॥
चीन्हत है कै नाहीं रानी। मरदन काल आइसमैं ज्ञानी ॥

मैंतो तो कहं दीक्षा दीन्हा । तक्षक डसै तोहि कहं लीन्हा ॥
तब तोहि मंत्र दियो मैं सोई । काल को अजय जाहितें होई॥
तें पुनि तैसो तत्त बिचारा । हर्षत भये तब धनी तुम्हारा ॥
बेगी चलो गहर जिन लाओ । प्रभु को दरस तुरत तुम पाओ ॥
इदुन्मती सपना जो देखा । बैसो देखो ताकर रेखा ॥
तीनों गुण चक्षू में राता । और पुन देखो ऊँचा माथा ॥
और स्वेत सब देख्यो अंगा । पाइ प्रतीति स्वप्न परसंगा ॥
अरे काल तैं क्या ठग मोही । हंस रूप नहिं छाजै तोही ॥
यह छल मता न लागु तुम्हारा। है समर्थ बड़ गुरू हमारा ॥

साखी—मम गुरु की परतीति यह, धरनी धरै न पांव ॥
काग न होय मराल सम, यह छति तोहि न भाव ॥

चौपाई ।

सुनिं के दूत कीन्ह तब रोषा । इन्दुमती को दीन्ह सो दोषा ॥
तिन पुनि सुमरे अपने स्वामी । भक्त हेतु चले अन्तर्यामी ॥
ज्ञानी आवत काल पराना । ता कहँ लै पुनि लोक सिधाना॥
धन्य भाग तिन रानी केरा । ज्ञानी आय काल सों फेरा ॥
रानी मानसरोवर आई । अमी सरोबर ताहि दिखाई ॥
कबीर के सागर पांव परो जबहि। सुरति सागरै पहुँची तबही ॥
पहुँचत तासु हंस हरषाने । सब मिलि कीन्ह तासु सन्माने॥
सतगुरु दाया कीन्ही जबहीं । षोड़श भानु रूप भयो तबहीं ॥
भयो हर्ष रानी अति शोभा। राजा लग्यो करन अति क्षोभा॥
हे सतगुरु मैं तुम बलिहारी । राजहि आनो पतहि हमारी ॥
सतगुरु कहैं सुन संत सुजाना। राजा भाव भक्ति नहिं जाना ॥
आ तोहि भयो हंस को रूपा। कारण कवन चहै तू भूपा ॥

साखी—राजा भक्ति न जानही, तातें हंस न आव ॥
बिना तत्त्व नहिं हिरम्मर, हंस न होय मुक्ताव ॥

चौपाई ।

हे स्वामी मैं भव जब रहिया । राजा भक्ति न वरजै कहिया ॥
है संसार का ऐसा भाऊ । पुरुष पराय ध्यान नहिं आऊ ॥
जो कोइ राते त्रिया बिरानी । ताकी करै सबै मिलि हानी ॥
छोटे बड़े को यह ब्यवहारा । धन्य नृपति जिनज्ञान बिचारा ॥
करों साध सेवा मैं जबही । राजा मोहि न बरजै कबही ॥
जो राजा अटकावत मोही । कैसे भेटत तव मैं तोही ॥
धन्य नृपति जिन भक्ति दृढ़ावा । आनिय ताहि हंस पति रावा ॥
सुनि ज्ञानी ताही की बाता । चले तबहि तहँही बिहँसाता ॥
आये भवसागर जब ज्ञानी । यहां नृपति की अवध खुटानी ॥
आये लेन ताहि यमदूता । राजहि कष्ट जो देत बहूता ॥

साखी—हंस ताको नहिं पावे, घेर रहो जो राव ॥
राजा परो अगाध में, सतगुरु कों गुहराव ॥

चौपाई ।

राजा तत्त्व मता नहिं चीन्हा । ताते यम राजन दुख दीन्हा ॥
पावे यम नहिं छांड़े ताही । भक्ति योग जो ऐसो आही ॥
तब ज्ञानी आये तेहि ठाईं । देखत जीव बहुत संकाईं ॥
ज्ञानी लीन्ह जीव कर आगे । देखत दूत ताहि सब भागे ॥
दूत चहूँ दिशि देखत जावैं । मरकट दृष्टि पक्षि नहिं पावैं ॥
जस आकाश कहँ जाय पखेरू । मरकट दृष्टि आये सत हेरू ॥
ऐसे ताहि दूत गुहरावै । नहिं जब देखैं तब पछतावै ॥
जहाँ लागि गम तहँ लग हेरा । आगे देखा धुन्ध कुहेरा ॥
हंस गये जब लोक द्वारा । रूप अनूप देख उजियारा ॥
गये नृपति हंसन की पांती । तामध्ये पुन जइस अजाती ॥

साखी—रानी चीन्हौ नृपति को, आन धरे तव पांव ॥
नृप मन में बहु संकुचै, लज्या ताहि जनाव ॥

चौपाई।

कह रानी सुन साधु सुवारा। चीन्ह नृपति म हौं तुम दारा ॥
इन्दुमती है मेरा नाऊँ। यहि कारण टेक्यौ तुव पाऊँ ॥
राव कहे किमि करों प्रमाणा। बर्ण तुम्हारो हंस समाना ॥
शोभा बहु देखों तुम अंगा। कैसे तोहि कहों अर्धंगा ॥
हँस करुणामय वचन उचारा। निश्चय मानो वचन हमारा ॥
हंस रूप होवे नर नारी। जिन भवसागर भक्ति विचारी॥
नृप को भयो हंस को भावा। जिन पुनि ऐसी शोभा पावा ॥
भुई में रहें जो अंतक दूता। तिन पुनि विस्मय कीन्ह बहूता
दूत चलि गये जहँ त्रिय राऊ। तिन सों जाय कह्यो सत भाऊ
स्वामी श्वेत बरण यक आवा। रानी नृप लेइ लोक सिधावा ॥
कैसो लोक ब्रम्हा परजरेऊ। जरत हुताशन जनु घृत परेऊ ॥
चलो हरी हर संग हमारे। जहँवा राजा रानी सिधारे ॥
चले बेग तब तीनो भाई। बाहन साज चले तिय राई ॥

साखी—सुम्मेरते ऊँचे गये, तब देखा अँधियार ॥
नव खंड महि तब छाडि के, आगे को पगधार ॥

चौपाई।

पहुँचैं विषम सरोवर जाई। बिजुली हुओ तहां अन्याई ॥
ब्रह्मा शिवबाहन थकि गयऊ। सतगुन तेज विष्णु का भयऊ ॥
अलख निरंजन भयोतिहिठाऊ। औ देवी तें आशिष पाऊ ॥
तेहि ते विष्णु गो अँमर जहँवा। कामिनि मान सरोवर तहँवा ॥
देखत रूप विष्णु मन भूला। श्वेत पुष्प पद्म जस फूला ॥
कामिनि मान सरोवर राजै। जुत्थ २ जोड भल साजै ॥

नर अज्ञान तहां तिन्ह लागी। सत सुकृत बोले अनुरागी ॥
सब मिलि भयो अचंभो बाता। ऐसा अचरज नरकौ बाता ॥
कोई कहे नर देख परवेरू। ऊँची दृष्टि सबै मिलि हेरू ॥
बेग निकारौ यहां ते आजू। रहन न पावै करौ सों काजू ॥

साखी—दोइ सठहार जो भेजे, नर से कहो बुझाय ॥
छाड़ौ मान सरोवर, यहां नहीं तुव ठांय ॥

चौपाई।

प्रतिहारन तब आज्ञा कीन्हा। तिन सों हरि अस बोलन लीन्हा
देखा चाहों तुम पुर पाटन। हे प्रभु भेद कहो कछु आपन ॥
तब प्रतिहार कहें समझाई। नर को रूप दरश नाहिं पाई ॥
जौ लग बीरा नाम नहिं पावे। सो जीव कैसे लोक सिधावे ॥
भयो जो बड़ो निरंजन राऊ। तेऊ यहां रहन नाहिं पाऊ ॥
जातूबिष्णु कहा सुन मोरा। नातर चक्षु हीन होय तोरा ॥
चले बिष्णु तब लागि न बारा। हरि कमलासों मंत्र बिचारा ॥
यह कछु बात अंचभो आही। कहत न बनै रूप मोहि पाही ॥
देख सठिहारन बेग निकारा। चले जीव जहां राजतुम्हारा ॥
अचरज बात कही नहिं जाई। धन्य पुरुष जिन लोक बनाई ॥
जब मैं ध्यान धरा प्रभु केरा। अलख रूप देखौं बहुतेरा ॥
ऐसा रूप कहूं नाहिं देखा। अचरज भयो न जाय विशेषा ॥

साखी—चले ब्रह्मा हरि शंकर, छांडि लोक के खोज ॥
जस शशि के परभाव तें, सकुचन होत सरोज ॥

कलियुगमें कवीरसाहिबको प्राकट्य—चौपाई।

सतयुग त्रेता बीत जब गयेऊ। कलियुग को प्रभाव तब भयऊ ॥
छाड्यो लोक लोककी काया। प्रथमहि मान सरोवर आया ॥

पाँच तत्त्व तीन गुण साना। त्रिगुण रूप कीन्ह उतपाना ॥
रूप मनुष्य सुदेह सम्हारा। नाहिं लेई अहार व्यवहारा ॥
जो कोई ये बिधि करै उछेदा। सोतो है करता को भेदा ॥
करता देह तबै निरमावा। ता माहिं तत्व प्रकृतिहि स्वभावा॥
आयो निरगुण काछ शरीरा। आवा गमन की मेंटन पीरा ॥

जगन्नाथ के मंदिर की स्थापना।

प्रथमहि आयो सागर तीरा। जगनाथ जहँ काष्ठ शरीरा ॥
जाते परम बचन मैं हारा। बाजी मांड़ किया प्रतिपारा ॥
आसन बेल तीर मैं लीन्हा। सो स्वरूप काहू नाहिं चीन्हा ॥
आये राम बिप्र के रूपा। तासों काथि कह्यो अजगूता ॥

साहेब कबीर वचन।

साखी—बाचा बंध मैं आइया, मंडप उठि है तोर ॥
मान त्रास सिंधू जबे, दर्शन देखै मोर ॥

चौपाई।

तो कहँ थापौं बचन प्रवाना। तीन लोक तुम करत बखाना ॥
तो परसै कौ कहा अधिकारा। सोई कहौ तुम बौद्ध बिचारा ॥

बौद्ध वचन।

मन बच क्रम परसै जो मोई। कोटि जन्म लगि बिप्र सो होई॥
औ पुनि विद्या औ धनवंता। यहि सुन कै जो भयो हरषंता ॥

साहिब कबीर वचन।

आवा गवन निवारन आयो। सत्त शब्द ते जीव छुड़ायो ॥
जो बहु जन्म थाकौं तुहि पाहीं। कैसे जीव लोक तब जाहीं ॥
बिना नाम नाहिं जीव उबारा। कहि अब भाखौं कछु उपचारा
मारकंडे तर जाइ नहाई। अस हँस बोलै त्रिभुवन राई ॥

अक्षैबट कृष्ण रोहिन अस्नाना। इन्द्रदमन समुद्र अस्थाना॥
यहि विधि तीर्थ करै मन जानी। पुनर्जन्म ना होवै प्रानी॥
साखी–हँसै कृष्ण छल मता कहि, जिमि माहुर को मीठ॥
अस पुरुषोत्तम क्षेत्र फल, ज्ञानवंत कहँ दीठ॥

चौपाई।

समाधान हरि को जब कीन्हा। आसन उदधि तीर में लीन्हा॥
चौरा कीन्ह तहाँ पुन जाई। इन्द्रदमन तब आज्ञा पाई॥
जवहीं मंडप काम लगावा। सागर उमँग खसावन आवा॥
उठावहु मंडप करि निःशंका। उदधि त्रास की मेटब शंका॥
आयो क्रोध लहर जब पानी। मेट्यो पुरुषोत्तम सहिदानी॥
लहर उमंगी सागर तीरा। आइ जहां तहँ सत्त कबीरा॥
देखत दरस महां भय मानी। बोल्यो बचन जोर युग पानी॥
हे स्वामी तुव मर्म न जाना। जगन्नाथ वर किया पयाना॥
क्षमौ अपराध मोर प्रभु राया। लेउ बैर अस कीजे दाया॥
तासौं पुनि अस बचन उचारा। बोर द्वारिका बैर तुम्हारा॥
साखी–राम रूप सायर बँध्यो, तातैं उदधि उमंग॥
बोरौ नगर द्वारिका, भयो रुचिर परसंग॥

चौपाई।

तब तैं उजर द्वारिका भयऊ। पंडन कों तब स्वप्ना दयऊ॥
आये मोपर साहिब कबीरा। आवागमन की मेटन पीरा॥
ऐसा स्वप्न पनडन दीन्हा। तीर्थ स्नान तेहि सब कीन्हा॥
उठ्यो जो मंडप बाज वधावा। कनक उरे नहिं हाथ बनावा॥
एक दिना कौतुक अस भयऊ। सागर तीर पंडा चलि गयऊ॥
करि असनान चलो मंडप पासा। मन में ऐसा बचन प्रकाशा॥
प्रथमहिं चौरा म्लेच्छ को गयऊ। ठाकुर के नहिं दर्शन कियऊ॥

तेहि के मन पाखंड जब देखा । किय कौतुक सो कहौं विशेषा ॥
जहँ लग मंडप पूजहिं बीरा । तहँ लग देखहिं रूप कबीरा ॥
गयो जहां कठ मूरति आहीं । कबीर को रूप भयो तेहि पाहीं ॥
अच्छत पुहुप लै विप्र मन भूला । नहिं ठाकुर जो पूजहु फूला ॥
साखी—तब पंडा सिर नायो, प्रभु चरित्र अवगाह ॥
क्रोध छाड़िये स्वामी, कृपा करौ मोहि पांह ॥

चौपाई ।

अपने मन आन्यो प्रभु हीना । तातें प्रभु तुम कौतुक कीन्हा ॥
तासौं बचन मैं बोलये लीन्हा । सो पंडा पुनि कही जो कीन्हा ॥
सुनहु विप्र तुम्हे आयसु होई । दुबिधा भाव करौ मत कोई ॥
ब्राह्मण छाड़हु जात अजाती । तातें मेंटब सब की फांसी ॥
भोजन माहि भर्म जो करहीं । ताको अंग हीन अनुसरही ॥
तब पनडा विन्ती अस ठाना । हे स्वामी मैं तोहि न जाना ॥
करौ सोइ जो आज्ञा दीजे । कछु जांचोंसो प्रदान मुहि कीजे ॥
जो मन इच्छा होय तुम्हारी । देउ सोई अस बचन उचारी ॥
साखी—सागर नीर बड़ खारा, सो तो ग्रसो न जाय ॥
निर्मल जल मैं मांगौं, सो दीजे प्रभुराय ॥

चौपाई ।

जहँ चौंरा है सागर तीरा । खनहु कूप होय निर्मल नीरा ॥
तहां खनाय आय तब कीन्हां । जल मँगाय पंडन कहँ दीन्हा ॥
कूप बनायो सायर तीरा । तहां भयो पुनि निर्मल नीरा ॥
यह तो भेद जाने सोइ संता । कबीर सागर बूझै मतवंता ॥
हरी भेद मैं सागर आयो । तेही सकल चरित्र सुनायो ॥
भृंगी को कीन्ही मैं दाया । ताको एक जो भेद बताया ॥
ताको दियो मता कड़हारी । जीव भेद सों लेत उबारी ॥

पठवै जीव नाम दे जहंवा। मुक्ति पदारथ फल है तहंवा ॥
चार भानु कामिन उजियारी। मानसरोवर है वह नारी ॥

धर्मदास वचन।

धर्मदास कहै असबेनी। स्वामी कहू संत उत पानी ॥
हंस रूप जो पोड़स भाना। कामिनि चार भानु परवाना ॥
साखी—कारण कौन है कामिनि, चार भानु कछु थोर ॥
शब्द गहे सब हंसा, संशय भई जब मोर ॥

साहिब कबीर- वचन—चौपाई।

सुन धर्मनि मैं तोहि बताऊँ। यह सब भेद मैं तोहि बुझाऊँ ॥
चौरासी लख जोइन ठाना। मुक्ति छेत्र नरको उत्पाना ॥
तातैं प्रभु प्रगटे नर भाऊ। तातैं शोभा हंस बहु पाऊ ॥
आय अदेह पुरुप रह जहँवा। नर को रूप प्रगट भये तहँवा ॥
जेहि मुक्ति चंदा निमाई। हंस प्यार मुक्ति अधिकाई ॥
भ्रंगी कीट शिष्य जो होई। पावै भेद मग्न होय सोई ॥
सिंधु मध्य राह तिन केरा। आवै जीव ताहि सों फेरा ॥
वहै राह भ्रंग राज कहँ दीन्हा। यही भेद विरले जन चीन्हा ॥
पावै भेद सन्त जन सोई। आन्यो सतगुरु गम जेहि होई ॥
निज बीरा जो चौंरा पावै। इकोतर सौ जीव लोक सिधावै ॥
साखी—यही चरित्र करि आयो, चौंरा के ब्यवहार ॥
निज बीरा जो पावै, तब जीव होय उबार ॥

चन्दवारे मे प्राकट्य की कथा।

चौपाई।

आसन कर आयो चंदवारा। चंदन शाह तहाँ पगु धारा ॥
बाल रूप धर आयो तहँवा। आठै पहर रहचो मैं जहँवा ॥

ताकी नारि गई अस्नाना । रूप देखि ताकर मन माना ॥
लेगये बालक सो निज गेहा । बहुत भांति तिन कीन्ह सनेहा॥
चंदनसाहु देखि रिसियाना । चल गयो नारि तोर अब ज्ञाना॥
बेग डार बालक को आजू । सुने लोग तो होय अकाजू ॥
जाति कुटुम्ब सुने जो कोई । यह तो भली बात नहिं होई ॥
चेरी हाथ तिन दीन्ह पठाई । उद्यान मांझ तिन दीन्ह अड़ाई॥

नूरी को मिलने की कथा ।

काशी में प्राकट्य ।

कछु दिन काया धर दुख पावा। यहि अंतर इक जुलहा आवा ॥
नूरी नाम जो वा संग नारी । देखत बालक भई सुखारी ॥
बालक देख नारि मन भूला । रवि के उदय कमल जस फूला॥

साखी—अति सनेह जिन कीन्हा, नूरी देख रिसान ॥
बालक लीन्हों नारि अब, कहा भयो अज्ञान ॥

बालक वचन—चौपाई ।

बालक दीन्ह मही महँ डारी । अस सुनि बालक दीन्ह हुँकारी॥
बूझो काल फांस नरनारी । पूर्व जन्म तोहि लीन्ह उबारी ॥
पाछिलि प्रीति भयी अब मोही। तातैं दरश भयो अब तोही ॥

नूरी वचन ।

तुम जानो अब मैं नहिं जाना । सो सब मोहि सुनाओ काना ॥

नूरी के पूर्वजन्मकी कथा ।

कबीर वचन ।

पूर्व जन्म तैं ब्राह्मण दूखी । तोरे ग्रह कबहू नहिं सूखी ॥
श्वपच भक्त मम प्राणन प्यारा । ताको मान पिता अवतारा ॥
श्वपच भक्ति करै पुनि जबही । मात पिता पर लागै तबही ॥

ताकी प्रीति भक्त मन धारा । तातैं भयो विप्र अवतारा ॥
प्रथम प्रीति मोरे मन भावा । तोरे ग्रह मैं यहि बिधि आवा ॥
तोसों कही इक भक्ति दृढ़ाई । राखौ मर्म हमार छिपाई ॥
देब सुवर्ण नित्य मैं तोही । एक मुहर पुनि ताकी होई ॥

साखी–बोलो नहिं यहि कारणें, तोहि मुक्ति नाहिं भाव ॥
माया देख भुलानो, यहि कारण तब पाव ॥

चौपाई ।

घर नहिं रहो पुरुष औ नारी । मैं शिव सौं अस वचन उचारी ॥
आनि देव लक्ष्मी संसारा । आपन को निज भीख अहारा ॥
आन की बार बदत हौ योगू । आपन नार करत हौ भोगू ॥
काशी मरे जन्म नाहिं होई । तुव महिमा वर्णै सब कोई ॥
औपुन तुम सब जग ठग राखा । काशी मरै अजल तुम भाखा ॥
जब शंकर होवै तुव काला । कहां रहे तव भक्त बिचारा ॥
जीवन करत जो होय अकाजा । या शंकर तब तुम कहँ लाजा ॥
सुनि शंकर तब चल्यौ लजाई । यहि अन्तर जुलहिनि चलि आई ॥
हे स्वामी मम भिक्षा लीजै । सब अपराध क्षमा प्रभु कीजै ॥
एक पुत्र जो बिधि मोहि दीन्हा । कबहूं बात कहै नाहिं लीन्हा ॥

शंकर वचन ।

तोरे ग्रह पंडित अधिकारी । झूठ बोल कस बोलहु नारी ॥
हरि कमला सम देखो ज्ञाना । बुद्धिवंत तुम पुत्र सुजाना ॥

साखी–सुनकर महिमा पुत्र की, नारि धरे तब पांव ॥
हे स्वामी मम इच्छा, श्रवणन बचन सुनाव ॥

चौपाई ।

कहा लजान कहा फिर आवा । बिहँसि कहा तुम सिद्ध कहावा ॥
सुनि कै वहै हर्ष बहु कीन्हा । भिक्षा कनक जाति को दीन्हा ॥

भिक्षा दै प्रमुदित चलि आई। हस्तामल को खोज न पाई ॥
वाचा बंध तहाँ पुन आयो। काल कष्ट मैं तोर मिटायो ॥
सुन जुलहा मन भयो अनंदा। जिमि चकोर पायो निशि चंदा॥
ले सुत चलै हर्ष मन कीन्हा। तासों धुनि अस बोलेहि लीन्हा
आगिल जन्मजब होइ तुम्हारा। तुम्है पठायब यम तैं न्यारा ॥
साखी—सुत काशी को लै चले, लोग देखन तहँ आव ॥
अन्न पानी भखै नहिं, जुलहा शोक जनाव ॥

चौपाई।

तब जुलहा मन कीन्ह तिवाना। रामानंद सौं कहि उत्पाना ॥
मैं सुत पायो बड़ गुणवंता। कारण कौन भखै नहिं संता ॥
रामानंद ध्यान तब धारा। जुलहा सो तव वचन उचारा ॥
पूर्व जन्म तैं ब्राह्मण जाती। हरि सेवा कीन्हेसि भलि भांती
कछु तुव सेवा हरि की चूका। तातैं भयो जुलहा को रूपा ॥
प्रीति प्रभू गहि तोरी लीन्हा। तातैं उद्यान में सुत तोहि दीन्हा

नूरी वचन।

हे प्रभु जस कीन्ह्यो तस पायो। आरत हो तुव दर्शन आयो ॥
सो कहिये उपाय गुसाई। बालक क्षुधावंत कछु खाई ॥
रामानंद अस युक्ति बिचारा। तुम सुत कोइ ज्ञानी अवतारा॥
बछिया जाही बैल नाहिं लागा। सो ले ठाढ़ करै तेहि आगा ॥
साखी— दूध चलै तेहि थन तैं, दूधहि धरौ छिपाइ ॥
क्षुधावंत जब होवै, ता कहँ देउ खवाइ ॥

चौपाई।

जुलहा इक बछिया लै आवा। चल्यो दूध कोउ मर्म न पावा ॥
चल्यो दूध जुलहा हरषाना। राख छिपाइ काहु नहिं जाना॥
सुन भामिनि आगेचल आवा। सोलैजाइ कोई भेद न पावा ॥

बाललीला।

दूध न पीवत नाम कबीरा। खेलत संत संग मत धीरा॥
तिनसों कहँ जागौरे भाई। बिना नाम नहिं काल पराई॥
कोई न बूझै भेद हमारा। रामानँद पर तब पगु धारा॥
तब अपने मन कीन्ह उपाई। तिनहि दरश कैसहु नहिं पाई॥

रामानन्दको गुरुकरना।

जाहिं रामानँद गंग स्नाना। तेहि मारग में जा पौढ़ाना॥
तबहि पांव गुरु लाग कबीरू। रामानँद बोल्यो मत धीरू॥
उठ कबीर तब बचन उचारा। रामानँद है गुरू हमारा॥
साखी—कराहिं गोष्ठी शिष्य सब, कोईज्ञान जीत नहिं जाय॥
सत्त ऋषी सुधि पाई, गुरु सों बोले आय॥

चौपाई।

विद्या कह मलेच्छ कों दीन्हा। रामानंद क्रोध तब कीन्हा॥
चले शिष्य तब आज्ञा पाई। कबीर संतको आन बुलाई॥
सुनतहिं शिष्य चहूं दिशि धाये। हेर खोज कबीरै लाये॥
आये कबीर लागि नहिं बारा। गुरु मंडल में आन पगु धारा॥
अन्तर कपाट शिष्य तब लाया। पूजत रामानंद हरिराया॥
सुन कबीर आगे चलि आये। गुरुहि आनकर मस्तक नाये॥
लक्ष्मीनारायण मुकट सिरनाये। पहिरै वस्त्र माल नहीं समाये॥
तबहि कबीर बचन अस भाखा। वस्त्र पहिरि माला तुम राखा॥
अंतर कपाट खोल तब दीन्हा। रामानंद सुन अचरज कीन्हा॥
दिव्य ज्ञान तुम कहँ केहि दीन्हा।जोर कर गुरुहि विनोदित कीन्हा
कब हम तुम को दिक्षा दीन्हा। नाम हमारा काहे तुम लीन्हा॥
गुरू हमैं तुम दिक्षा दीन्हा। झूठ बोलका क्या फल चीन्हा॥

साखी—गुरू जब चलै नहाने, तब हम दिक्षा पाव ॥
तातैं गुरु कहि थाप्यो, फिर पीछे पछताव ॥

चौपाई ।

पूजौ पाहन पंडित धर्मा । पहिल न जानो तुम्हरो मर्मा ॥
मैंतो चाहत मुक्ति पदारथ । तुम पाहिन पूजो निश्चारथ ॥
तब गुरु सुनकै अचरज भएऊ । योग समाधि वैंकुठहि गएऊ ॥
सत्त समाधि बिष्णु जब देखा । तापर देश कबीरहि लेखा ॥
जहँ देखा तहाँ सत्त कबीरा । झूठ ध्यान भूले मत धीरा ॥
हे कबीर तुम मर्म न जाना । जान मलेछ किया अपमाना ॥
जो कछु आहि मुक्ति सन्देशा । सो सब मोहिं कहौ उपदेशा ॥

साहिब कबीर वचन ।

छाडौ सबै मान अभिमाना । तो कह देब मुक्ति फल दाना ॥
शिष्य सखा सौं बात जनाऊ । काल तोर शरणागति आऊ ॥
कहै कबीर काल है काला । है बड़ दारुण काल कराला ॥

साखी—मुक्तिदेव नहिं लेव तुम, रामानंद गुरु देव ॥
भोरहि जन्म गवांय हौ, करि पाहन की सेव ॥

सिकन्दरशाहकी बारता—चौपाई ।

ता निशि को तब भयो प्रभाता । काशी आइ भयी एक बाता ॥
आये सिकन्दर शाह सुलताना । है ब्याधा बहु भेद न जाना ॥
रामानंद की सुनी बड़ावा । तातैं शाह आप चलि आवा ॥
आये मंडप जहां सुलताना । रामानंद तब देख रिसाना ॥
आये शाह सन्मुख भये जबही । रामानंद मुख फेरा तबही ॥
बार अनेक तिहितें मुख फेरा । ताकी ओर क्रोध कर हेरा ॥
मार्‌यो खड्ग पर्‌यो खसि धरनी। शाह के अंग अनिल सम बरनी
आये शाह जहां दुःख नसावन । अधिक भई जो देह सतावन ॥

पय औ रुधिरं चल्यो गुरु अंगा। पावक उठी शाह के अंगा॥
तबै शाह ने सुधि अस पाई। महिमा जान कबीर बुलाई॥
साखी—कबीर दर्शन दीन्हा जबै, तपन भई सब दूर॥
शाह कहा तुम सांच हो, औ अल्लह का नूर॥

सिकन्दर बचन—चौपाई।

पय औ रुधिर चल्यो गुरु अंगा। शाह कहै यह कौन प्रसंगा॥

कबीर वचन।

जेहि तन मान्यो शब्द हमारा। तेहि तैं चले दूध की धारा॥
कीन्हा कालऊ केर विचारा। आधा अंग रुधिर अनुसारा॥
अगले जन्म मुक्ति जो होई। अंकूरी जीव कहावै सोई॥

गौको जिलाना।

यहै चारित्र तहां पुनि भयऊ। तब नूरी के मंदिर गयऊ॥
काजी मुल्ला सबै रहाये। गाय आनि के गलो कटाये॥
देखि दुखित भये सत्त कबीरू। महा ब्याधि गाई की पीरू॥
केहि कारण गाई जो मारा। सो सब मोहि कहो उपचारा॥
काजी काया देख बिचारी। एकहि ब्रह्म गाय क्यों मारी॥
गाय जिवावहु मुर्गा सारू। नातर वेद अथर्बन हारू॥
सत्त शब्द है जासु शरीरू। व्यापी महाँ गाय की पीरू॥
साखी—उठिकै गाय ठाढ़ी भई, आज्ञा जबही कीन्ह॥
काजी मुल्ला जानि कैं, पांव पकर तब लीन्ह॥

चौपाई।

नगर के लोग अचंभो लागा। यह कबीर कर्त्ता हो जागा॥

मगह गवन।

तब तहँ से पुनि कीन पयाना। उत्तर देश मगध अस्थाना॥
नूवा नूरी काल बस भयऊ। तिन पुनि जन्म मनुष्यहि लयऊ॥

राजा बीरसिंह देव बड़ राऊ। ताके गृह अब धारचो पाँऊ॥
कमलावती तासु नृप नारी। तिन बड़ सेवा कीन्ह हमारी॥
ताकौ दीन्ह पान परवाना। तिन कछु भेद हमारा जाना॥
कह्यो तासों मुक्ति प्रभाऊ। सुनत भयो आनंदित चाऊ॥
बिजुलीखां पठान बड़ ज्ञानी। सन्त जान जिन सेवा ठानी॥
तासौं कही मुक्ति परभाऊ। ज्ञान गम्य तिन बहुत कराऊ॥

साखी–अति अधीन जब देखा, ता कहँ दीन्हा नाम॥
प्रीति जानि के ताकी, कछु दिन किय विश्राम॥

चौपाई।

बिजुलीखां कहै पीर हमारे। नृप वीरसिंह हैं शिष्य तुम्हारे॥
साहिब आप तजो जब देहा। दोइ दीन सों कीन्ह सनेहा॥
सुनि बिहंसि अस आज्ञा ठानी। दोइ दीन सें हम निरवानी॥
हिन्दू तुरक नहीं हों भाई। सुन पठान शंसय उपजाई॥
जो तुम दोइसों न्यारी रीती। मेरे मन कैसे होय प्रतीती॥
तुम तो हो अल्लह के बन्दा। यह तो अहै आदमी गंदा॥
तुमहि शरीर तजौगे जबही। शरीर उपाय करों क्या तबही॥
कै पृथिवी कै देहों जारा। करहु हुक्म सो पीर हमारा॥
जो कछु होइ लोक व्यवहारा। सोई कहो मम पीर पियारा॥
जो साहिब हुक्म जस करिहो। मजार तुम्हार रचिके धरिहौ॥

साखी–बिहंसि कह्यो तव तिनसैं, मजार करौ सम्हार॥
हिन्दू तुरक नहीं हौं, ऐसा बचन हमार॥

चौपाई।

दिन कछु गये तासु संबादा। राजा वीरसिंह ने भेजे प्यादा॥
बंदीछोर आवैं मम गेहा। रानी बिन्ती कीन्ह सनेहा॥
ताकी प्रीति तहां पगुधारा। दुःखद्वन्द तिन सबै बिसारा॥

तिन पुनि कहीसुनौ गुरु ज्ञानी। द्वितिया ब्याह लगन मैं ठानी॥
ब्याहजो होय बिकट अस्थाना। क्या जानै होवै संग्रामा॥
कोइ घायल कोइ जाई मारा। खाडो आही दुहु दिश धारा॥
ताकी आज्ञा करौ गुसाई। तिनहि देह क्या करों उपाई॥
क गाड़ौं कै जारौं धूरी। यह संशय मेटौ प्रभु मोरी॥
करौ सोई लोक कुल धर्मा। बिन लागै कोई जाने न मर्मा॥

साखी–जो गाड़ो तो मार्टी, जौ जारौ तो छार॥
करो लोक की जो कृति, बोलता ब्रह्म निनार॥

चौपाई।

हे स्वामी तुम मोहि बताओ। तुम तन तजो तो काहि कराओ
जस प्रभु तस पुन सेवक करई। सेवा युक्ति सदा सो तरई॥
जों तुम कितहू करहू प्याना। गाड़हि लागै तुमहिं पठाना॥
हंसै सबै यह देखि परतच्छा। गुरू तुम्हारो आहि मलेच्छा॥
तस कछु भेद बताओ स्वामी। करो कृपा सो अन्तर्यामी॥
वास्तव तेही कहौ बुझाई। जारौ देह जो क्षार उड़ाई॥
तातैं लोक मैं नहीं छुड़ाओ। यातें दोई दीन फरमाओ॥
गयो नृपति तहँ साज बराती। कौतुक रचो देह तब त्यागी॥
सुनत साज दल चले पठाना। रानी मुर्दा ले बिलखाना॥
लेकर गाड़ै करै निमाजा। करत विहांनक दूरी काजा॥

साखी–रानी भेजे प्यादहीं, तन जब तजो कबीर॥
आयो बिजुली खान तब, सुनि वृत्तान्त गम्भीर॥

चौपाई।

राजा पास पठाओ पाती। सुनतहि क्रोध जरी तब छाती॥
छाड्यो ब्याह चले दल साजी। हनें निशान सम्हर की बाजी॥
बाजा गाजी तुरही आवहि। यह बिजुलीखां युक्ति बनावहि॥
ऐसी भांति सों कीन्ह पयाना। रन के आगे बाज निशाना॥

बांधी अस्त्र अस चले बहु वीरा । कुहुक वान औ बहु भन तीरा ॥
बरछी सेल औ छुरी कटारी । खर्ग रु तुरी चपल परचारी ॥
दोइ दिशि देख अस्त्र चमकारा । मानो साज चलो जल धारा ॥
राजा कीन्ह मरन का ठाना । वयरख रोप जो रहो पठाना ॥
जब देखा मैं होत लराई । युद्ध जानि अस कर्यो उपाई ॥
रानी जान मोर कछु मर्मा । तिन पुनि कही तजो नृप भर्मा ॥

साखी–पहिले खोदो माटी, मुर्दा देखु निहार ॥
मुरदा नाहिं वहि भीतरे, कहा करत हौ रार ॥

चौपाई ।

सत कवीर नहीं नर देही । जारै जरत ना गाड़े गड़ही ॥
पर्यो दूत पुनि जहाँ पठाना । सुनिकें खान अचंभो माना ॥
दोइ दल आइ सलाहा जबही । बने गुरू नाहिं भैटे तबही ॥
दोनों देख तबै पछतावा । ऐसा गुरू चीन्ह नाहिं पावा ॥
अपने मनैं अचंभा ठाना । रंक माहिं धन गया छिपाना ॥
दोऊ दीन कीन्ह बड़ शोगा । चकित भये सबै पुन लोगा ॥

रतना की कथा ।

तव अपने मन कीन्ह विचारा । रतना कँदोइन कै पगु धारा ॥
रतना समाधान बहु कीन्हा । राजहि पठय सँदेशा दीन्हा ॥
तुम नृप किमि करते पछताना । निश्चय आही शब्द प्रवाना ॥
रहौ सदा शब्दहि मन लाई । दर्शन मोक्ष होय नाहिं भाई ॥

साखी–बिजुलीखां सौं दुवा कहि, किमि कारण पछताव ॥
रहौ नाम लौ लाइके, जातें कर्म कटाव ॥

चौपाई ।

लोक वेद में ऐसे बिचारा । किमि कारण मन दुखी तुम्हारा
सुनै दंडवत बहु विध कीन्हा । तत्व मता नामहि गहि लीन्हा ॥
रतना सों कहि मता अपाना । तेहि सुनिकैं हरष बहु आना

हेस्वामी मोहि कीजै चेरी। जातें कटै कर्म की बेरी॥
धन्य शब्द धनि जो कछु चहिये। सो सब स्वामी मोसों कहिये॥
सबा सेर मिष्ठान लै आवहु। और सबासौ पान मँगावहु॥
इतना चहिये और न काजा। तातै भाग चले यमराजा॥
सोई अंश पान निज लीन्हा। ताको जीवदान मैं दीन्हा॥
अंकूरी जिव भेंटे निज गेहा। नूबा नाम जो प्रथम सनेहा॥

साखी—ताको पठयों निज भवन, तीन लोक तें न्यार॥
नूरी के मन इच्छा, धर्मदास अवतार॥

चौपाई।

सुन धर्मदास यहै कुल धर्मा। मटो तीरथ वरत कुल भर्मा॥
कोटि जन्म कीन्हौं तप धर्मा। बिन सतगुरु नहिं मिटिहै भर्मा॥

धर्मदास वचन।

हंसराज जो दर्शन दीन्हा। जन्म स्वारथ अधम को कीन्हा
हे प्रभु मोरे बंदी छोरा। हौं प्राधीन दास मैं तोरा॥
आनहुँ पान और मिठाई। जितनौ रतना के मन भाई॥
आनहु रतना कहौ तुम स्वामी। कृपा करो तुम अन्तर्यामी॥

कबीर वचन।

प्रथमहि जो पावै निज बीरा। पुरुष रच्यो सुख सागर तीरा॥
जाके रहे पुरुष औ नारी। बीरा नाम जीव रखवारी॥
सबा लक्ष जीव नित्त जो मारा। तातैं सबा सेर व्यवहारा॥

साखी—सबा सेर मिष्ठान जो, और सबा सौ पान॥
इतना लै जो शिष्य हो, यम तेहि देखि डरान॥

चौपाई।

मुहर देखि जैसे घटवारा। जिन्हैं घाट ऊपर बैठारा॥
जो कोई झूठारूप बनावै। बिना पान जान नहिं पावै॥

आने फेर परवाना सोई । जैसा अंक मुहर परहोई ॥
इतनी सुन हरषे धर्मदासा । शिरनी पान लाइ धरे पासा ॥
सेत सिंहासन सेतई साजा । सेत पान सिर क्षत्र बिराजा ॥
पानै दलतैं सबही कीन्हा । तामें अंक अग्र को दीन्हा ॥
प्रथमहि तिनुका वेग तुरायी । मारग भेद तबै समुझायी ॥
बांएं दाहिने है सहिदानी । इक दिश धर्म द्वितिय दुर्गदानी ॥
पाछै चित्र गुपित्र को थाना । तेहि ताजि हंसा देई पयाना ॥
टूटै घाट अठासी क्रोरी । हंसा चढै नाम की डोरी ॥

साखी--यमसों तिनका तोरकै, तव दीजै निजपान ॥
पाइ प्रसादै हर्षे तव, शब्द देख मन मान ॥

चौपाई ।

जाइ उवारौ हंस अँकूरा । मन की दिशा देख मन भूला ॥
हे प्रभू कौन शब्द है सारा । तौन शब्द तें जीव उवारा ॥
एक शब्द पुनि दीन्हा हेरी । यही शब्द तें जीव उवेरी ॥
जस दरपन लै दीजे हाथा । दर्शन देखै मुख औ माथा ॥
धर्मदास सुनत मनमाना । विकसे कमल उदै जनु भाना ॥
यही वस्तु से जीव उवारा । और ज्ञान है वहुत अपारा ॥
मूल नाम अक्षर धुनि साचा । जेहितें जीव काल सों वाचा ॥
आदिनाम पुरुष कर आही । भाग जीव पावै पुनि ताही ॥
धन्य भाग वस्तु जिन पाया । मोकहँ सतगुरु अलख लखाया ॥
अक्षर मूल और सव डाला । डारहि में फल फूल रसाला ॥
किंचित को फल पावै सोई । कहैं कवीर अमर सो होई ॥
अक्षर मूल अमीपँच शाखा । साखी रमैनी ताकी पाता ॥
सुमिरन डार पुहुप है जोगा । तेहि सम आहि ना दुसर भोगा ॥

साखी—अक्षर धुनि लौ लावई, अवराधैपरिचय योग ॥
कहैं कवीर संशय गयी, भोगहि मध्ये भोग ॥

चौपाई।

भव मैं अक्षर परचै पावै। सत्त गहै सतलोक सिधावै॥
पुहुपहि सें फल उपजै सारा। फल है मुक्ति भोगसे न्यारा॥
हे प्रभु जो इतना नहिं जाना। सो जिव कैसे लोक पयाना॥
पंच अमी का सुमिरन दीजे। बंदी छोर ताहि किमि कीजे॥
औगुनि ताहि देव जप माला। आवहिं लोक सो भौनहि डाला॥
निश्चय कहौ पंथ कर भाऊ। दुविधा भाव लखो मत काऊ॥
कहो पंथ जो पाँजी वाका। धरती शीस स्वर्ग का नाका॥
साखी—यहि विधि राह चलावहू; सुनहू हो धर्मदास॥
जीव छुड़ाओ कालसौं, सत्त शब्द परकाश॥

धर्मदास बचन—चौपाई।

हे प्रभु मैं कछु कहत डराऊँ। कहौं सो एक वस्तु जो पाऊं॥
जो नहिं पावहिं एती साजा। तासौं किमि डरि है यमराजा॥

कबीर बचन।

साठ समय बारह चौपाई। एही तत्त्व हंस घर जाई॥
पांच अमी महं एकौ पावै। है परमान सो लोक सिधावै॥
अथवा जो एकौ नहिं पावै। चार करी तत्त्वन मन लावै॥
चार करी बूझै मन लाई। यमराजा तेहि देख डराई॥
अदेख देख तत्त्व मन धरयी। बोलता ब्रम्ह सोंपरिचय करयी॥
इन की देख नाम लौ लावै। डोर गहै सत्य लोक सिधावै॥

धर्मदास बचन।

हे प्रभु जो इतना नहिं जानै। सो जीव कहां करै विश्रामै॥
नामहि पाइ तत्त्व मन धरई। दुबिधा भाव कबहुं नहिं करई॥
निर्गुण नाम रहे लव लायी। ताके निकट काल नहिं जायी॥

साखी–खोज कर सत शब्द का, गहै तत्त्व मत धीर ॥
निश्चय लोक सिधाइ है, अस कथ कहैं कबीर ॥

धर्मदास बचन–चौपाई।

हे प्रभु जापर दाया होई। पावै वस्तु सार पुनि सोई ॥
अथवा जो ऐती नहिं पावै। हे प्रभु तो कैसी बनि आवै ॥

साहिब कबीर बचन।

पावै सार जान निज बीरा। निश दिन सुमिरै धन्य कबीरा ॥
जहाँ सुने सतगुरु को नामा। सुने भक्ति छाड़ै सब कामा ॥
सुने जो भक्ति तत्व मन लावै। देह छोड़ि सत लोक सिधावै ॥

धर्मदास बचन।

हे प्रभु जो इतना नहिं राता। तासौं कैसी कहिये बाता ॥
माया जीव अधिक लपटाना। तातें प्रभु पूंछौ हठ ग्याना ॥

साहिब कबीर बचन।

धर्मदास मोहि यहि भावै। करही जाप धनी जो पावै ॥
आवै मल्ल तब करें लड़ाई। जाने दाव घात चतुराई ॥
तबहीं बने कृषी को साजा। कोठी बीज खेत उपराजा ॥
साखी–शूरा बैर भल खोजिये, बीज धरहिको सार ॥
ल्याया बीज न बोइये, ऐसा मता हमार ॥

चौपाई।

बिना नाम बहु तन डह काया। फिर २ भौ जल भटका खाया ॥
जुग२जन्म बहुरि भव लीन्हा। होई हित नहिं नाम विहूना ॥
नाम पाय जो तत्व न धरई। ते पुनि जन्मैं गुरु क्या करई ॥
तत्व प्रमाण यही धर्मदासा। तातैं मिटैं काल की फाँसा ॥

धर्मदास वचन।

बालक कहा तत्त्व कौं जानैं। मुक्त होय तेहि कौन प्रमान ॥

साहब कबीर वचन।

बालक नाम को दीजै बीरा। पहुचै लोक जब तजै शरीरा॥
त्रिया कह सनेह है सारा। उपजै भाव होय जमन्यारा॥
जातैं नर अचेत अज्ञाना। तातैं तत्त्व नाम परमाना॥
तत्त्व है मूल और सबसाखा। ताको नाम जोग मय भाखा॥
जो नर तत्त्व ना राखे ज्ञाना। ताको ज्ञान बालक सम जाना॥
पावै आदि अंत निज बीरा। पुरुष रच्यो सुख सागर तीरा॥
छटै मास बीरा निज पावै। है प्रमान सो लोक सिधावै॥

साखी—तत्त्व मुक्ति है निश्चय, औ बीरा निज सार॥
माया लीन्ह नर प्राणी, भूल परा संसार॥

धर्मदास बचन—चौपाई।

निसिदिन रह माया लपटाना। सो प्रभु कैसे होय निर्वांना॥

साहिब कबीर बचन।

निसदिन रहे माया बिस्तारा। पलको भजै तो उतरै पारा॥
पलको नाम चित्त ना धरई। ते पुनि जन्मैं गुर क्या करई॥
कर्म निवारन जेहिते होई। परिचय सहज तत्त्व है सोई॥

धर्मदास बचन।

सो मोहि स्वामी प्रगट बताऊ। केहि विधि जोग कर्म समझाऊ॥

साहेब कबीर बचन।

प्रथम सत्य आसन आराधै। निवरी कर्म जो या बिधि साधै॥
काम मारिये अल्प अहारा। जहाँ काम तहि जोग बिकारा॥
कोइ कछु कहै हृदय नहीं धरई। निंदा बिन्दा सब परिहरई॥
तजै देह जिमि कांचरि सांपा। आलस निद्रा सहज निदापा॥
दृष्टि न जावै भल और मंदा। मनहि न आनै संसो नदा॥
धोती वस्ती नेती करई। जिमि कामिनि सो ग्रहै बहरई॥

तिनका खेह मंदिर में होई । करई दूर भामिनी सोई ॥
या विधि काया संयम राधै । बांधै मूल अरु नाको साधै ॥

छंद–मूल बांधै नास साधै काया संयम जानिकै ॥
मन पवन दोई तुरी साजै युक्ति जीव बनायकै ॥
देइ ताड़ना चित्त कौ तुवक सर छाडै आस हो ॥
तेही आस चढ टौरै मवासा जीव होय निकास हो ॥

सोरठा–ऐसी वाजी होइ, मन के संग दौराइये ॥
मन शूरा पुनि सो; कष्ट परै पुनि ना टरै ॥

चौपाई ।

परै कष्ट तव तोरिगे वासा । राखै खङ्ग नाम को पासा ॥
नाम अस्त्र ते दूत डरायी । भागै अरि शूरा जिमि पायी ॥
अरि के भाजैं होय हुलासा । दुविधा मिटै कमल परगासा ॥
अष्ट कमल देखै पुनि सोई । मानौ रंक महा धन होई ॥
देखै ब्रह्म जहाँ अस्थाना । भय भाजै तव हो निर्वाना ॥

अष्ट कमल वर्णन ।

अष्ट कमल तोहि भेद बताऊँ । अजपा सोहं प्रकट बुझाऊँ ॥
मूल कमल दल चार ठिकाना । देव गणेश तहां कीन्ह पयाना ॥
ऋिद्धि सिद्धि वासा तहँ होई । छै सौ जाप अजपा तहँ सोई ॥
द्वितीय कमल षट दल परमाना । तहँ कमलन कर आहि ठिकाना
सावित्री ब्रह्मा है जहँवां । षट सहस्र जाप है तहँवां ॥

छन्द–त्रय कमल दल अष्ट है हरि लक्ष्मी तिहि संग मौं ॥
षट सहस्र जहँ होई अजपा निरखि देखो अंग मौ ॥
कमल चौथा द्वादसदल शिव को तहां निवासु हो ॥
सुरति निरति करि लोक पहुँचै षट सहस्र जहां जासु हो

सोरठा–पचयें कमल प्रकाश, तिहिं षोड़स दल अहै ॥
आतम जीव निवास, इक सहस्र अजपा कह्यो ॥

चौपाई ।

छटवां कमल अहै दल तीनी । सरस्वती तहँ बासा कीनी ॥
दोसौ एक अजपा जहँ होई । बूझे भेद सो बिरला कोई ॥
भौर गुफा दो दल परवाना ।सातों कमल को आहि ठिकाना॥
एक सहस्र अजपा परकाशा । तहां बोलता ब्रह्म को बासा ॥
तहां जोग साधे बहु जोगी ।इंगला पिंगला सुखमनि भोगी॥
तहां देख असंख्य जो फूला । ब्रह्म थाप काया में भूला ॥
सात कमल जान सब कोई ।अष्टम कमल बिनु मुक्ति न होई॥
बिनु सतगुरु को भेद बतावै । नामे प्रताप जोग हिं आवै ॥
काया तें जो बाहिर होई । भाग जीव पावै पुन सोई ॥

छंद ।

बहु भांति मुनि ऋषिजोग ठान्यो भयो रहित नहिं लेसहो ॥
काया थापी सुरति सों सब काग भये नहिं हंस हो ॥
पक्षी होइ तब होइ महाबल नाम बिना तो काग हो ॥
पक्षी त्यागि जो नाम साधे हंस होय बड़ भाग हो ॥
सोरठा–जोग तो आहि अपार, पक्षी भया पर नयन नहिं ॥
जोग नाम उजियार, नाम तेही जो पावही ॥

चौपाई ।

पक्षी भाग नयन जिन पावै । ताके जहां तहां उड़जावै ॥
देखे लोक जो गुरू बतावै । पक्षी नयन को यहै स्वभावै ॥
अथवा नाम नेक जो पावै । साधे तत्त्व जो लोक सिधावै ॥
नाम नयन पक्षी जो होई । तेहि समान दूसर नहिं कोई ॥
बाहिर को मैं कहब ठिकाना । सुरति कमल सतगुरु निरवाना॥

छःसो एक एकसो बीसा। अजपा ऊपर देखे ईसा॥
सात दल कमल देव ऋषि माना अष्ट कमल उनहूं नहिं जाना॥
छंद—यहि भांति अजपा तत्त्व ऽराधे बस करे पांचों भूत हो॥
रुनक झुनक बाजे आदि अक्षर दिमंकर बाजे तार हो
षट चक्र बांधे देह में तब जोग मुद्रा सार हो॥
प्रेम को बाजै पखावज प्रति दिना ततकार हो॥
सोरठा—आतम जीव जो जाय, मुक्ति मुक्ता संग मे॥
तिन सँग ब्रम्ह समाय, जिमि जा सरिता सागरै॥

चौपाई।

सरिता परै सिन्धु महँ जबही। दुबिधा भाव न उपजै कबही॥
सरिता संग रहे यक नीरा। भिन्न भाव कथ कहैं कबीरा॥
दक्षिन नयन जब नेह निहारी। ते समरै बहुतै अधिकारी॥
चंदन निकट वृक्ष जो होई। भेद सुबास प्रबल है सोई॥
संगति का फल ऐसा होई। यह तो भेद जाने जन कोई॥
चंदन नाम सुमेर है जोगा। इतनी प्रकट करै जो भोगा॥
आतम जीव भेद पुनि होई। चंदन बेल कहै सब कोई॥
चंदन कष्ट सब कोई जाना। यहै भेद बिरले पहिचाना॥

छंद।

जोग सम कछु भोग नाहीं देखु हृदय बिचारि कैं॥
पांच को बस करो आपने वसै पांच सम्हारि कैं॥
तीन गुण औ नाम चौथा वहुरि इनहिं सम्हारिये॥
तव जीतिये निश्कंटक हो प्रति जोग यहि विधि साधिये॥

सोरठा।

मेटे जम को दंड, मुक्ति होय तेहि अटल पुन॥
विप को करे निकंद, जोग होय जो नाम फल॥

चौपाई।

संशय मिटे जोग के धारे। मैं अपने मन कीन्ह बिचारे ॥
संशय को खंडन है जोगा। ता सम आहि न दूसर भोगा ॥
जीव को काज जाहि तें होई। सोई जतन करो सब कोई ॥
अथवा देह जोग कोई न साधे। तो अब सहज जोग अवराधे ॥
ता में मिल जो यह निस रहई। दुबिधा भाव कबहुं नहिं करई॥

साखी-पांच तत्त्व गुण तीन हैं, और प्रकृति पच्चीस ॥
चौंतीस ऊपर डेरा करई, नाम तत्त्व इक्कीस ॥

चौपाई।

चौंतीस ऊपर डेरा करई। नाम तत्त्व पलक नहिं टरई ॥
ये सब एक नखा में राखै। गुरू प्रसाद अमीरस चाखै ॥
सतगुरु दया सम्पुट उघराई। शून्य शहर में बैठे जाई ॥
देखे बोलता ब्रह्म तेहि ठाई। करे हर्षघर्ष सी जाई ॥
ब्रह्म देखि त्रिकुटी म मुक्ता। जीव सीव होय इक जुगता ॥
जीव सीव एकै लख जाना। देह जीव तब देख पयाना ॥
शब्द प्रतीत देख सत लोका। गुरू की दया मिटे सब धोखा
अगम अलख सो गुरु समझावै। सुरती निरती सें दर्शन पावै ॥
गुरु की दया गम्य जो होई। निश्चय दर्शन पावै सोई ॥
एक बार जो दर्शन पावै। देखै बहुरि बिलम्ब न लावै ॥
एकै सुरति निरति जो धारै। सुरति सनेही दीप निहारै ॥
यह निस तत्त्व मता जो धारै। गुरु प्रताप सों लोक सिधारै ॥
जाते सहज जोग नहिं होई। तातें आरति साधे लोई ॥
जो मनसा मारे नहिं कोई। तो पुन दासी कर निज सोई ॥
जो कोई काछे सन्त का भेखा। तासों कहिये जोग का लेखा ॥

साखी-गेही लीन्हें आरती, संत सोई सो भोग ॥
इड़ा पिंगला साधि कै, सुष्मनि ऽराधे जोग ॥

चौपाई ।

जैसे ग्रेही के मन नेहा । तैसे साधे जोग सनेहा ॥
आसन दृढ पर नारि न जावै । ग्रेही रहै न भेष बनावै ॥
देखी देखा भेष बनावै । राध जोग तो शोभा पावै ॥
भैषै धरै सूरता चाही । कादर भेष की हांसी आही ॥
जाते मन सूरमा नहिं होई । तातैं ग्रेही थाप्यो सोई ॥
ग्रेही में छल मता अपारा । तातें सत्य भक्ति चित धारा ॥
करे जो सेवा संत की सोई । आरत भक्त महा फल होई ॥
धन्य संत जो आरति साजा । कालजंजालतेहि घर तैं भाजा॥
आरति समान भक्ति नहीं दूजा । सब ते भली संत की पूजा ॥
चरणामृत तासु को लेई । सुरति निरति चरणन चित देई ॥

साखी—संत आरती जोग मन, कराहिं गंगन में बास ॥
ग्रेही जोग न जानहीं, कर आरति परकाश ॥

चौपाई ।

विना जोग नहिं होय उबारा । कै नेवर कै दीपक बारा ॥
तातैं सहज जोग मैं भाखा । शिरनी पान महातम राखा ॥
आरति तो नानाविधि साजै । पान मिष्टान भक्त भय भाजै॥
जो कछु आहि जोगकर भाऊ । सब भाखौ आरति परभाऊ ॥
वह देही यह ग्रेही व्यवहारै । काया संजम दै अनुसारै ॥
निसिदिन सुरतिनिरति विचारा । तातें मंदिर सेत सम्हारा ॥
पाचौं तत्त्व तीन गुन साधै । तातें मन बिच आरति राधै ॥
इंगला पिंगला सुष्मनि वासा । मन विच कर्म आरत प्रकाशा ॥
बांधै मूल नाम को साधै । दुबिधा मिटै एक अवराधै ॥
एक धरै कर प्रकृति पचीसा । सोई पुरुष आरति मैं दीसा ॥

साखी—उलट पवन जब आवै, त्रिकुटी भेंट जो होय ॥
गुरु की दाया प्रकट हो, संपुट उघरै सोय ॥

चौपाई।

उघरै संपुट गुरु की दाया। नारिअर को देखै परभाया॥
तत्त मूल नरिअर मो जाना। ज्ञानवंत भजि हो निर्बाना॥
अनहद बाजै त्रिकुटी ताला। तातें भक्ति जो होय रिशाला॥
बिन कर तार पखावज बाजै। अनहद धुन निसदिन तहँ गाजै॥
अष्ट दल कमल फूल जो फूला। तातें सुमिरन किय समतूला॥
सुन अति जोग छतीसौं रागा। तातें भांति भांति पद जागा॥
जोग करत में देह बिसारै। या संसार में काज सम्हारै॥
जोग समाधि छूटत नहिं देखा। आरत से मिटै कर्म विशेषा॥
प्रतिदिन जो समाधि मन लावै। तातें सदा आरति गावै॥
जोग हीन तत्त नहिं लहई। तातें पान पढ़ोता चहई॥
देखो मन बहुरंग अपारा। तातें पहुप से बिस्तारा॥
देह समाधि गंध बहु होई। साधे अग्र प्रवल है सोई॥
चौका सेत हंस भल छाजै। सेत सिंहासन छत्र बिराजै॥

साखी—परचै में मन बांधै, करे जोग मन बास॥
संतन आरत जोग मन, दीपक करे प्रकाश॥

चौपाई।

मन औ पवन आहिं दो धारा। तातें पवन अनिल घृत जारा॥
जोग जुगत बिन संग न होई। पालै पवन पाहन है सोई॥
गगन बाव गरजै जो जायी। दीप शिखर द्वारै ठहरायी॥
ल्यावै जोग अमीरस चाखा। तातें महा प्रसाद जो भाषा॥
धन्य अंकूर जीव है सोई। परिचय जोग करै तन जोई॥
जोग न होय आरती करई। सोई जीव भवसागर तरई॥
मूल नाम और सब शाखा। पुहुप जोग महातम राखा॥
जोगी दृष्टि भाव बहु करई। घट २ में सुमिरन अनुसरई॥

मूल नाम मुक्ति फल जोगा। तातें नरिअर मिष्टान का भोगा
देह विसार जोग फल चाखा। मन बच कर्म नरिअर सत भाखा
उज्जल मंदिर सेत सम्हारा। तेहि रूप साज्यो पनवारा॥
मुक्ति पदारथ अबेधा हीरा। तेहि पाये कोई गहिर गंभीरा॥
चंदन काष्ठ सिंहासन चाही। सुमिरण नाम इकोतर आही॥
साखी—उत्तम पान बड़ो ना, टूटा भंग न होय॥
नरिअर चहियेनिर्मल, महां मुक्ति फल होय॥

चौपाई।

और कछू बात संपत्ति आही। काचा जीव सुन विचले ताही॥
ताते सहज बतायो भाऊ। प्रचै जीव को परम स्वभाऊ॥
अथवा जो इतना नहिं होई। सहज आरती थापो सोई॥
सवा सेर आनो मिष्टाना। तत्त सवासौ आनौ पाना॥
प्रति पूनौं जो आरति करई। सोई जीव भवसागर तरई॥

धर्मदास बचन।

हे प्रभु पूनों कह अधिकारा। दया करौ दुख भंजन हारा॥

साहिब कबीर वचन।

तुम कह दीन्हयही दिन पाना। तासौं पूनौं आरति ठाना॥
अथवा सबई अर्थ नाहिं जाना। दोई आरति थाप प्रमाना॥
छटे मास साजौ निज बीरा। तातें दोई आरती मत धीरा॥
साखी—जोग आरती फल बड़ा, सत्त बचन परकाश॥
दुविधा मेंटो निश्चय, सत्तलोक होय वास॥

चौपाई।

सत्तभाव देखहु मति धीरा। लगन साधि देऊ निज बीरा॥
विना लगन करो मत शिक्षा। जोती खेती जो भल दिक्षा॥
ऊसर बीज डारही कोई। निर्फल खेती किसान की होई॥

ऊसर बीज का ऐसा भाऊ। बोवाहिं बीज अवृथा जाऊ॥
काचे जीवकहँ सुमिरन देई। परिचय जीव तात गहि लेई॥
ता कहँ कैसी करहि जमराजा। देह धरै तो गुरु कहँ लाजा॥
बिना लगन मगन भयो जानी। ऐसो अहै शिष्य सहिदानी॥
पूरा जब शिष्य जो होई। गुरु देव भेद बतावै सोई॥
अथवा जो गुरु अंतर राखौ। गुरु मे धोख संत में भाखौ॥
लीक करी औ पंथ वतावै। शोभा अधिक गुरू सों पावै॥
जस वाना तस होवै करनी। ता गुरु सम औरन बरनी॥
सदा लीन नाम जो भाखै। पांच आतमा अनुरुचि राखै॥
पांचमें करे पच्चीसों नारी। ते बस किये जोग अधिकारी॥
मरत तजो जस कांचरि सांपा। तातें सब को मेटब दापा॥
करो शिष्य जो यहि बिधि कोई। पुरइनि पान रहै जनु सोई॥

साखी–जो ऐसी बनि आवै, और बान है सार॥
तातैं ग्रेही थापो, काढ़िहारी संसार॥

चौपाई–गुरुवाके लक्षण।

आप स्वारथी भेष बनावै। मन की दशा ताहि चित लावै॥
तृष्णा ज्ुक्त करे गुरुवाई। जम सों बाचै कौन उपाई॥
निश्चय मानो शब्द हमारा। पर द्रोही कैसा काढ़िहारा॥
आप अबूझ औरन समझावै। साखि रमैनी झगरो लावै॥
जातें साधु सेवा नहिं आवै। तृष्णा कारण भेषबनावै॥
सिंह न चाहै स्वान सियारा। परचै बिना कैसे कढिहारा॥
पर नारी औ मन्मथ कर्मा। यह तो भेद काल को मर्मा॥
मारहि मनसा होइ सो होई। नातर नारि करे पुनि लोई॥
ग्रेही माहिं भक्ति को भेवा। नाम जपै औ साधू सेवा॥
जोपै सहज भाव कडिहारा। शिष्य कियेका क्या अधिकारा॥

ग्रैही माहिं शुक्ल फल बासा। सो सब बचन कहौं परकाशा॥
नाम गहैं राखै सत करमा। सब जीव तजै एक पुनि भरमा॥
साखी—मदरु मांस को त्यागै, औ न करैं जीव घात॥
अथवा जो कछु चूकि है, साधु सेव चितराख॥

चौपाई।

करे आरती मन बिच करमा। पर घर तजै जान निज भरमा॥
गृह म जो रहे उदासा। निश्चय सत्त लोक में वासा॥
जो कोई यहै अवज्ञा करई। कछु दिन रूपहीन अनुसरई॥
जोको चूके साधु की सेवा। ताकर फल भाखों कछु भेवा॥
जाइ सो लोक नाम परतापा। तजैं देह जिमि कांचारि सांपा॥
देखै जाइ हंसन की पांती। ता मध्ये अस बैठ अजाती॥
जातें चूक परैं सिवकाई। तातें शोभा हीन लजाई॥
जो कोई याकी करे उछेदा। तातें मैं समझाऊं भेदा॥
ग्रही तरै सो कौन विशेखा। गुरु को अचरज यौं बड़ देखा॥
गुरू नहीं कोई यहि भवसागर। सतगुरु आप अजर मनि आगर॥
जाप आहि जो नाम हमारा। तातें नाम धरा कड़िहारा॥
कड़िहार लेवै जीवका भारा। तेहि न सूझ किमि उतरै पारा॥
साखी—जैसे महिमा प्रकट है, तैसे सिन्धु का नीर॥
सरिता सब कड़िहार भये, सतगुरु सिन्धु कबीर॥

चौपाई।

सरिता माहि बारि जो होई। जीव जन्तु सुख पावै सोई॥
सरिता लहै पुण्य परमारथ। सत कड़िहारी जोग स्वारथ॥
अथवा नीर अथाह न होइ। सहज जोग भाखौं पुनि सोई॥
नदी में सोह सदा जो बारी। ऐसी उत्पाति आहि हमारी॥
यासा जाय नदी के पासा। बिन पानी सो जाय पियासा॥

प्यासा पानी नदी न पावै। जहँ पानी तहँ तृषा बुझावै ॥
इक जीव ग्रेही आप उबारा। बार नदी नहिं सत कड़िहारा ॥
बांधे अस्त्र करे शुरमाई। तिन के त्रास सौं दुर्जन डराई ॥
काछे रहै शूर का साजा। आयो समय कादर हो भाजा ॥
यहि विश्वास रहै जो कोई। स्वारथ पिंड परै जन सोई ॥
परै पिंड तब होवै हांसी। दै विश्वास जीव जो फांसी ॥
चतुरा पहिले करै उपाई। द्रव्य न मिले अनते नहिं जाई ॥
धन मिले का यही उपाई। ग्रेही भाव रचो जो भाई ॥
क्षुधावंत जाके ग्रह आवै। भले बुरे के असन न जावै ॥
क्षुधावंत जो करही आसा। सन्तुष्ट होय तुर तेहि पासा ॥
औ जहां देखै सत्त का वाना। ता कहँ बहुत करे सन्माना ॥
करै साधु सेवा मनराता। ता कहँ मैं वर्णौं विख्याता ॥
जस जासूस द्रव्य नहि पावै। ताके नग्र सैंध दै आवै ॥
चतुरा करै तासु सन्माना। जो पुन ताको करे बखाना ॥
ताके पुर का मता बतावै। विवेककी महिमा दरसावै ॥
ताके गेह दरब न चलै जबही। ताकी महिमा दूत करे तबही॥
बहुविधि महिमा करे जमदूता। तासों कोई न करे अजगूता ॥
भाजै कादर नगर बधाई। ताके निकट जान नहिं पाई ॥
धन्य सोई जो गेही करई। भल मंदा को उदर भरई ॥
ता कहँ होइ पुन्य परमारथ। नाम गहै जन्मैं होय स्वारथ ॥
कड़िहार सोइ जो शूरा होई। भाखों ताहि आप सम सोई ॥

साखी—कड़िहारी औ गृही को, कोई ना जाने अंत ॥
बिन परचै विसमाद है, हरषत परचै संत ॥

चौपाई।

भाषों संयम सत के भाऊ। अस गेही जो करै उपाऊ ॥
प्रात नेम जो करै अस्नाना। प्रथम प्रफुल्लित कमल बिगसाना॥

मद रु मांस कहँ त्यागै दोऊ । मिथ्या जीव घात पुनि सोऊ ॥
सत आसन पर निद्रा त्यागी । भली बुरी सैं रहत बिरागी ॥
जाइ जहाँ बर जहँ हितकारी । उचट न परई अन्तर भारी ॥
क्षुधावत हित कारी होई । अति प्रिय जान समोवहि सोई
यहि सम दूसर व्रत नहि जाना । ते जन पूनौं आरत ठाना ॥
कहौं जान दासा तन जोई । भागी जीवपावहिं निज सोई॥
शिष्य होय जो तन मन वारै । गुरु आज्ञा कबहूं नहिं टारै ॥
गुरु दै शब्द मुक्ति जेहि होई । तेहि समान दूसर नहिं कोई ॥

साखी—तन मन गुरु को दीजिये, मुक्ति पदारथ जान ॥
गुरु की सेवा मुक्ति फल, यह गेही सहिदान ॥

गुरु लक्षण—चौपाई ।

गुरु सोई जो सब ते न्यारा । सो सब मैं भाखौं उपचारा ॥
जल तैं पुरइन का है मूला । पानी पत्र न लागै फूला ॥
जातें देह धरा कढ़िहारा । तातैं चहिये सब उपचारा ॥
जैसे मूल पुरइन को पानी । ऐसहि दुनियां की सहिदानी ॥
काया धरै सब न कड़िहारा । पुरइन भेद तें उतरे पारा ॥
केतो शिष्य करे सनमाना । ते पानी पुरइन सम जाना ॥
इतना सुनै रहै लपटाई । ता वह जग समान है भाई ॥
पुरइन मुक्ति लोक में बासा । गुरु बिन परहि काल की फांसा॥
काल बस जीव नहिं तरई । तेहि विश्वास जन्म सोइ धरई॥
कहा संत सबही में भेदा । आप स्वारथी करहिं उच्छेदा ॥

साखी—नहीं सहज सत गुरु बचन, करम कुटिलता ठान ॥
चलै लोक गति नरकहूं, सरिता सिन्धु समान ॥

चौपाई ।

लोक गर्व गति राखै भाऊ । ताको देख मास पुन खाऊ ॥
बहुत यत्न मैं भाव बताया । जो नहिं बूझ अंत पछिताया ॥

धर्मदास बचन।

हे स्वामी तुम सुनो सत भाऊ। जो पूछौं सो मोहि बताऊ॥
जब तन तजे बोलता ब्रम्हा। किहिबिधि जाइ कहो सो मर्मा॥
सो मोहि स्वामी भेद बताऊ। धर्मदास टेके गहि पाऊ॥

साहिब कबीर बचन।

आवै अंत होय नर जबही। अंतक आनै पठवै तबही॥
जो जीव नाम तत्त्व मन लावै। ताको अंतक दूत नहिं पावै॥
नौ द्वारा लग छेकै जाई। दशवोंद्वार अब देउ बताई॥
दसो द्वारन केते न्यारा। भौंर गुफा में सो है तारा॥
गुरू प्रताप पंथ तेहि जायी। आदि पवन तेहिहोत सहायी॥
अरध उरध में पवन का वासा। मूल पवन प्रथम जो भाषा॥
तेहि पर हंस होय असवारा। पचासी पवन का जो सिरदारा॥
तिहिं चढ़ हंसा घरको जाई। मान सरोवर जा ठहराई॥
अंतक दूत करै पछताई। सो सब भेद कहौं समुझाई॥
भक्षै यहि कारण यमराया। तबहि जीव तोहि समझाया॥

साखी–काल फांस जेहि बांधै, जो नहिंराधै नाम॥
तत्त्व हीन जीव ब्याकुल, अंतक राखै ग्राम॥

चौपाई।

जो कछु पहिले भेद बताया। सो नहिं करै हतै यमराया॥
छठैं मास बीरा निज होई। सो नहिं होइ करौ क्या कोई॥
किंचित तत्त्व भाव विधि धारै। गुरु प्रताप ते लोक सिधारै॥
ताके निकट अंतक जो जाई। होय बलहीन चक्षु हीनाई॥
तहंवां आहि पंथ का फेरा। एक हमारे इक यमकेरा॥
गुरु जो प्रथमाहिं भेद बतावै। निज घर बैठ हंस सो आवै॥
आवै शीस ऊपर दै पाऊ। जाय तहां सो कहौं प्रभाऊ॥
यहि बिधि हारै यम कौ दूता। पाँजी रोक धर्म अवधूता॥

प्रथमहि मानसरोवर जाई । जहवाँ कामिनि राज बनाई ॥
शोभा हीन हिरंमर वारा । तातें अटकै हंस पियारा ॥
हंस द्वीप में पहुचै जाई । शोभा हीन सो बहुत लजाई॥

साखी—ते पुनि करै अधीनता, हंस सुजन जन पास ॥
कहा अपराध गुसांई, रूप न होय प्रकाश ॥

चौपाई ।

जब लग मूल दरश नहिं पावै । शोभा तब लग नाहीं आवै ॥
जब लग शोक भरौ नहिं भाई। शोभा तब लग नाहीं आई ॥
एक हंस नहिं शोक भराई । जो नहिं जीव इकोतर जाई ॥
पावै सार जान निज बीरा । पलकहि शोक भरै पुन धीरा ॥
प्रथमहि हेत द्वीप पर जाई । शोभा अधिक तहां पुन पाई ॥
शोभा तस षोडश जस भाना । रवितें क्षीन हो सलिल समाना
यहवां सूरज क्रांति प्रकाशा । वहवां जोती स्थिर निवासा ॥
ग्रासै सूरज शशि निरपाई । वहां न सतावै काल अन्याई ॥
जस कमोदिनि सम्पुट प्रभाऊ। तैसा वहां मैं युक्ति बनाऊ ॥

साखी—जस रविके परभावते, कमोदिन सम्पुट लाग ॥
ऐसो रवि है निर्मल, पावत तनही जाग ॥

चौपाई ।

रवि के उदय जस मिले चकेवा । हंसा हंस मिलै जस भेवा ॥
रैन तजै तब देही त्यागा । पहुंचे लोक हंस मिल जागा ॥
मिल जस चकई चकवाकरही । हंसा हंस भाव तस धरही ॥
रवि के उदय कमल जस फूला । हंस कमल सूरज रवि तूला ॥
रवि के उदय तिमिर जस भागा । हर्षेहि धर्म हंस मन जागा ॥
सरल गरल तें अन्तर जानी । धर्मराय अपने मन आनी ॥
काया शोभा उड़गन पांती । अस बूझै चिकुरन की क्रांती ॥

सोपुनि चिकुर आहि उजियारा। अस शोभा है हंस पियारा ॥
रजनी मुदित दिवस जो भएऊ। ज्योति अटल तस हंसा गएऊ ॥
साखी-नयन दोई भल छाजै, मानौ शशि की ज्योति ॥
शशि स्वभाव सो देखिये, ऐसी शोभा होति ॥

चौपाई ।

बरण तासु चक्षू शोभाई। फूटि चंद दो दिशा समाई ॥
नयन दामिनी होत झलहाला। पाछै नहीं अनिल उजियाला ॥
बादल घन बिजुली चमकाई। शोभा मानों तेज लजाई ॥
श्रवण सोहैं मनौ रवि के चाका। शोभा अधिक सु जोऊ थाका ॥
शोभा कंठ जैसे गिरि देवा। नाक कीन्ह सिष्ट जनु देवा ॥
शोभित कहे मिरनाल सरोजा। मुख जो कमल मिरनाल कुरोजा
है मिरनाल जनु सेतहि भाऊ। वदन प्रकाश शोभा बहु पाऊ ॥
विगसत कमल उदित जिमि तरुनी। हंस पदम दीपक जस वरणी
काया तासू कदली नेहा। रोम रोम मुक्ता को रेहा ॥

धर्मदास बचन ।

हे स्वामी मैं पूछौं भाऊ। जो पूछौं सो मोहि बताऊ ॥
अनबेधा जस देखियत हीरा। रोमत होवे हंस शरीरा ॥

साहिब कबीर बचन ।

साखी-जँघ पिंडुरी पग अँगुष्ठा, शोभा अधिक अपार ॥
शब्द रूप कारीगर, रवि शशि अनि जन ढार ॥

चौपाई ।

नख शोभा किमि करौं बखाना। जातें हंसन कौ उतपाना ॥
नख न होय जैसे नख हीरा। अंगुरी बाद बरन चँद चीरा ॥
हथली सोहै मनु पूरण चंदा। अँगुरिन पांति शोभा अरबिन्दा
जस क्रांती शोभा बहु भांती। छाजै तहाँ नखन की पांती ॥

एही सबै है रूप परभाऊ । सब उजियार पुरुष से आऊ ॥
सो सब शोभा भाव बताऊ । अगम उपेक्षा सबहि बताऊ ॥
जातैं भयो मानो अधिकारा । तातैं कहौं रूप व्यवहारा ॥
जस अकाश महं ऊगहि सूरा । होय उजियार सो तिनहू पूरा ॥
पाइर द्वीप होई बड़ चोखा । परमारथ सो करत बड़ तोषा ॥
रविगण पुरुष लगन जो लोका । उड़गये हंस मिटा सब धोखा ॥
दीप सार औ करी सम्हारी । तेज वरण चंदा अधिकारी ॥

साखी—तीनौं पुर उजियार भयो, ऊगे भानु अकाश ॥
तैसे पुर की ज्योति में, हंस जो करै प्रकाश ॥

चौपाई ।

एक सूर्य का किंचित भाऊ । जान उपेक्षा भाव बताऊ ॥
हंस सुजन हंस के राजा । पल २ हंस दंडवत छाजा ॥
एतिक हेत द्वीप उजियारा । बैठे सब जहँ हंस पियारा ॥
ते पुन हंस दंडवत करहीं । क्षण २ माथ चरन तर धरहीं ॥

धर्मदास वचन ।

हे प्रभु हेत द्वीप सुख पाया । अग्र द्वीप ताहि करी दाया ॥

साहिब कबीर वचन ।

हंस सुसज्जन दंडवत करहीं । पुरुष सौं फिर बिनती अनुसरहीं
जोग संतायन हंस लै आवहु । हेत द्वीप तिन को बैठावहु ॥
देखा चाहे चरण जो द्वीपा । मंजुल मंगल करी समीपा ॥
आज्ञा पाय चले हैं हंसा । चरण द्वीप पहुँचे निःशंसा ॥
अभय पक्ष हंस तहँ आवहिं । जोग संतायन भाव बतावहिं ॥
जिहितें आहि आदि परवाना । पावै हंस तब करहिं पयाना ॥
हंसराज तब मौन होय जाई । आवै हंस बहुत तेहि ठाईं ॥

साखी–सहस्र अठासी पालंग, और सहस से तीन ॥
इतने हंस तव आवै, यह अस्थिर कहँ चीन्ह ॥
पहिले वंदौ गुरु चरण, सुरति संतायन जोग ॥
बंदौ हंस सुजन जन, तिन प्रसाद यह भोग ॥

चौपाई ।

धन्य पुरुष जिन परिमल छाया । हंसन सुख बहुतै मन भाया ॥
तब हंसा बहुतै हर्षाना । प्रथम हंस सुजन जन ज्ञाना ॥
सुरति सनेही गुरु की दाया । हंस सुख बहुते मन भाया ॥
पुहुप द्वीप ताको बिस्तारा । चार करी केता उजियारा ॥
प्रथमहि महिमा जोत विस्तारा । बैठे जिन कहँ जोत अपारा ॥
नौसे संख औ तेरा करोरी । एतिक महिमा द्वीपहि केरी ॥
ता भीतर करी कस देखा । महिमा फल जस रवि को रेखा ॥
अस जनि जानो रवि को भाऊ । उतपक्षा सब भाव बताऊ ॥
अंबू करी बहुते उजियारा । धन्य पुरुष जिन शब्द उचारा ॥

साखी–इतना भाव सुख उपजै, अंबुकरी महँ जाय ॥
नाम तत्त्व जोराधे, सो अस्थिर बैठे आय ॥

चौपाई ।

शुभ करी किम करौं प्रवाना । जातें कूर्म्है काल उतपाना ॥
पक्षिपालना द्वीप बत्तीसा । तापर रूप सूर्य पच्चीसा ॥
इक दिश मनो सूर्य की पांती । दुबिधा भाव न रूप की क्रांती ॥
बरणों सूरज ज्योति अपारा । सोहै अटल रूप उजियारा ॥
औ सब शुभ्र करी को भाऊ । सब उजियार पुरुष से आऊ ॥
सिन्धू मध्य मेघ जस भरई । पुरुष शब्द ज्योति अनुसरई ॥
जस जीव रहै बिषय की आशा । शब्द पुरुष सत करे निवासा ॥
प्रथम करी का मर्म न जाना । सो पुनि कैसे जाइ ठिकाना ॥

दूसर द्वीप मम महा सुरंगा । परम हंस बैठे तिन संगा ॥
तीसर द्वीप जोग जहां रहई । ताहि द्वीप का मरम ना लहई ॥
आदि द्वीप पुरुष अस्थाना । तहां हिरंबर सुख कर थाना ॥

साखी—पक्ष पालना द्वीप बड़, जामें ज्योति सुरंग ॥
नाम तत्त्व जो राधे, तो मेंटे दुख द्वन्द ॥

चौपाई ।

मूल द्वीप मूल नाम उचारा । तातें अग्रबीरा निज सारा ॥
मूल अग्र बीरा निज पावै । इकोतर सौ जीव लोक सिधावै॥
शोक भरे काया नहिं छाजा । शोभा हीन हंस होय लाजा ॥
ते पुन बहुत करे पछितावा । सुजन हंस सौं बिन्ती लावा ॥
हंस सुजन जन कहैं अस वानी। शब्द हमार सुनों हो ज्ञानी ॥
जातें जीव काल बस रहई । पुरुष शब्द जो नाहीं गहई ॥
एक निमिष हंसा कर होई । पुरुष तेज तेहि होवै सोई ॥
सोई हंसा तन मन धरई । परम पुरुष सों परिचय करई ॥
परम द्वीप शोभा बहु होई । सब बिस्तार कहौं अब सोई ॥
तहां बिराजै जस पुन कमला । उड़गन सूर सनेह जनु जवला ॥

साखी—रत्नपदारथ थाका, पदम अनूप सुरंग ॥
उदित अवास बहुरि जितै, बिगसत सूर औ चंद ॥

चौपाई ।

जग मग ज्योति हंस सिर सोहै । ललित मौज रतनन जनु मोहै ॥
हंस के सीस छत्र जो धारा । पुरुष बानी तैं होय उजियारा ॥
मिटै तिमिर उदय जनु भाना । हिरंमर भांति सब रूप प्रवाना
सबै रूप जस भये चकेवा । हंसाहंस मिलै तस भेवा ॥
प्रथम हंस बैठे तह रहई । सो पुनि भक्ति परम पद करई ॥
बहु दिन रहै नर्क की खानी । धन्य गुरू हंसा कियो पयानी॥

बैठे हंस सबै इक पांती । मेंटो दुख जब भये अजाती ॥
संशय सबै पिछली गएऊ । रंकमहानिधि मानौ लहेऊ ॥
पुहुप द्वीप महँ बैठे जाईं । अमृत फलै जहां मिल पाईं ॥
मंगल करी देख जब जाईं । देखत शोभा बहुतलुभाईं ॥
मेघ महल सो है ब्रह्मंडा । तहँ तस सँग रहै अरबिन्दा ॥
जहँ लग मेघ बुन्द डरकाईं । तैसे कमल तहाँ बिगसाईं ॥
साखी—पुरुष आप जस स्वाती, भैरै मेघ शब्द झनकार ॥
जल सब भरो जो पोखरी, सोभा भूमि निनार॥

चौपाई ।

बुन्द निरंकार बरषावै ।शून्य शिखर तब शोभा पावै ॥
करी स्वाति तहँ अमृत आही । प्रथम हंस देखै पुनि ताही ॥
तिन पुनि ध्यान पुरुषसौं धारा ।बिगस्यो पुहुप बाणी उच्चारा ॥
फल अमृत तब टूटे चारी । तेहितें फल अनेक विस्तारी ॥
जेते हंस दर्शन को आये । एकएक सब हंसन पाये ॥
आज्ञा मांगि हंस सब पाया । तबते भई अमर की काया ॥
आस प्यास सब हंस अघाना । निर्वृति सुधा सो क्षुधा बुझाना
निवृति करी किम करव बखाना ।उदित भये जनु अगनित भाना
पालंग कोटि तीन को फेरा । निवृति करी इतनौ बिस्तारा॥
साखी—हंस आवै बहु व्याकुल, बहुत करैं पछिताव ॥
दयावंत प्रभु महिमा, मृतक दरस दिखराव ॥

चौपाई ।

प्रगट रूप देख्यो पुन कैसा ।जल बिलग गगन तासु रवि जैसा
हंस सबै तब दर्शन पावा । भया हरष मिटा पछितावा ॥
हंस सबै तब भये अधीना ।उड़गन माही शशिकौ चीन्हा॥
अस जिन जानेव शशि का भाऊ। उतपक्षा सबई भाव बताऊ ॥
चात्रक निस दिन बारि निहारै । पावै जल तब तृषा बिसारै॥

पुरुष दर्श स्वाती कौं पानी । देखि रूप सो तृषा बुझानी ॥
पदमै संपुट लागा जबहीं । हंसा परस रूप भयो तबहीं ॥
निजअस्थाने हंस न तब जाहीं । हंस द्वीप तहवाँ ठहराहीं ॥
एकहि जात रूप सब माहीं । दुविधा भावसौं देखत नाहीं ॥
ता भीतर पहुपन की सेजा । पंकज बीच आहि जनु लेजा ॥
अभै दीप ज्ञानी कौ वासा । तहँवां हंस करहिं सुखरासा ॥
पालंग तीन सौहै पुन द्वीपा । तहाँ पुरुप रहै अचर समीपा ॥
पहुप द्वीप बिगसो पुनि गुंजा ।गुंज मनौ शशि भानु अलुंजा॥
भये पग स्थिर हंस सुखारी । पुहुप द्वीप सिरजै छत्रधारी ॥
हंसा तब पग अस्थिर आये । अमर चीर शोभा बहु पाये ॥
मानसरोवर बहु नौनाई । शोभा रूप राशि बहुताई ॥
सुरति सागर डोर समोई । मुक्ती द्वार तहाँ सौं गोई ॥
सो द्वारा जो गुरू बतावै । मानसरोवर तैं चलि आवै ॥
तहाँ हंस शील का थाना । माणिक मध्य द्वीप निर्वाना॥
चौरासी लक्ष द्वीप कौ फेरा । आवे हंस तहँ कीन्हौ डेरा ॥
तहाँ है पुनि कामिनि राजा ।जग मग ज्योति तहाँ पुनि छाजा
बरणो शीस रूप भल आही । चार भानु जानौं तिहि पाही ॥

छंद–शीस झलकबहुँ बरण पांती रूप शोभा राशि हो ॥
नौ लाख उड़गन पोह राखै भान शसि को भासि हो
जग मगा चीकुर अतिहि सोहै राजे जैसे पुर सही ॥
अटल जेहि रूप बरनौ शशि बरण काया कही ॥

सोरठा–शशि औ भानु निचोर, शोभा राखी शीश पर॥
सेत वरण अंजोर, मान सरोवर कामिनी ॥

चौपाई ।

भले नेत्र दरसन कस देखा । मानहु अर्कहिंसुढार बिशेषा ॥
शब्द कारीगर रूप चमकारा । शशि अनेक ताही जनुढारा ॥

श्रवण गातु शोभा अधिकाई। जैसे छीर कै काढ़ मलाई॥
छीर भरो जनु शशि औ भाना। माखन रूप कामिनी ठाना॥
मौज अनेक ताके तन चीरा। लागे रवि शशि अगनित हीरा॥
चमके रूप ज्योति बहु भाऊ। सब उजियार पुरुष से आऊ॥

साखी—शोभा बहुते कामिनी, नख शिख सुन्दर रूप॥
बैठे मानो भाव धरि, चन्द्रभानु बहु यूप॥

चौपाई।

सार शब्द पावै जो ताई। ताके बल हंसा घर जाई॥
इतना रूप कामिनी अंगा। नहिं उपजै तहँ भाव अनंगा॥
बैठे रहईं हंस सुख पावई। दृष्टी भाव परम मन भावई॥
ऐसी भक्ति नहि महि माहीं। पटतर बनै देत नाहिं ताही॥
जस पाहन मंजुसै डारा। देखौ शोभा अगम अपारा॥
महल पंच भूत तहं नाहीं। हंसा बैठे सुख करै ताहीं॥
अग्र रुचिर छत्र सिर छाजा। हंसा लहत बहुत सुख साजा॥
जाय दिव्य तहं करहिं निवासा। विमल अंग शोभा बहु पासा॥
मिटै भ्रम तब परिचय पाई। जहां रहै तहँवां ठकुराई॥

साखी—करहीं हंस सुख अस्थिर, अम्बू करीअस्थान॥
देखौ द्वीप सो पावन, कमल करी निर्बान॥

चौपाई।

धन्य जीव पुरुष शब्द उचारा। जातैं शोभा अगम अपारा॥

धर्मदास वचन।

हे प्रभु सुन्यो हंस कर भेऊ। जो कछु पूछौं सो कहि देऊ॥
जो कछु होयआगे ब्यवहारा। आगे होय सो कहौ विचारा॥

साहेब कबीर वचन।

सुनु धर्मदास मैं कहौं बुझाई। आगे जस करि है अन्याई॥
बंश ब्यालीस अचल तुम्हारा। नाद बहुत है विंद बिचारा॥

तेही पाछै चरित अस होई । कहौं प्रगट नहि राखौं गोई ॥
अग्नि कौन अचिन्तपुरगाऊं ।तहां कौ वरण न तुमहिं सुनाऊं
भ्रमत नयन विकट है काया। नाम चकरथी काल स्वभाया॥
मानै जीव सो कहौ विचारा । जस रविकोट है है मुतु सारा ॥
ताहि नग्र की राज कुवांरी । सोभा चहैसहित जनु नारी ॥
ताकौ भेद मैं कहौं बुझाई । घर कुम्हार के जन्मे आई ॥
जनमत तात जननि कहँखाई । दृष्टी परत हतन होइ जाई ॥
जस पावक महं तृनै समाई । वाहिनी खाय जो देखन आई ॥
अग्नि समान चकरथी भाई । त्रन समान मलेछ अधिकाई ॥
वत्तिस अंगुल तासु शरीरा । कही अगम अस दास कबीरा॥
श्रवण एक नौ अंगुल ताही । डेढ नाक दो जिभ्या जाही ॥
यही स्वरूप बिश्व कहँ ढावै । तेहि अन्तर रानी चलि आवै॥
रानी दृष्टि परे तेहि पाहीं । भाजै गज केहरि की छांहीं ॥
तैसइं भाजे अंतक दूता । वंस तुम्हार थकै अजगूता ॥
मिटहि पंथ धर्मदास तुम्हांरा । काल चरित्रै करै अपारा ॥

धर्मदास वचन ।

हे सतगुरु सो पुनि बतावहु । चक्ररथी को भाव बुझावहु ॥
जब दिखराय काल कौ भाऊ । धर्मदास मन त्रासजनाऊ ॥

साखी—बहुत त्रास जब कीन्हें, भये व्याकुल मति भंग ॥
च रथी कौ भाव बतायो, कह्यौ वचन परसंग ॥

साहेब कबीर वचन—चौपाई ।

अवही भाव दूर है ताही । जनि डरौ त्रास वज्र जिव चाही ॥
दृढता जान करौ गुरुवाई । जातैंजीव लोक कहँ जाई ॥
जीवको बन्ध छुडावहु यम ते। हंस मुक्तावहु नाम जतन ते ॥

साखी–नाम जतन जो करै, ताकर होइ न हानि ॥
ज्ञान सागर सुख आगर, कहे कबीर बखानि ॥

॥ इति श्री ज्ञानसागर समाप्त ॥

सत्य विचार–चौपाई।

ज्ञान सागर ग्रन्थ को भाऊ। समझि बूझि के पारख लाऊ ॥
अनन्त प्रकार के शब्द पसारा। बिनु पारख नहीं होय उबारा ॥
शब्द परख की युगती आही। गुरु मुख कहा रमैनी माही ॥
रमैनी सताईस तेहिको जानू। बूझि विचारि के हृदय आनू ॥
पारख करन की युक्ति जब जानो। सांच झूठ की परीक्षा आनो ॥
काल दयाल को स्वरूप पिछानो। काल सन्धि झाईं मन जानो ॥
सार शब्द का पाओ लेखो। उभय आनन्द तबहीं तुम देखो ॥
करु पारख तब बन्धन छूटै। बिनु पारख जमै धरि कूटै ॥

। इति ।

इति

श्री ज्ञानसागर

समाप्त।